जुलाई - सितंबर 1997 प्रतियोगिता विशेषांक वर्ष : 29 * अंक : 3

वैज्ञानिक

हिंदी विज्ञान साहित्य परिषद की पत्रिका
भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र के सौजन्य से प्रकाशित

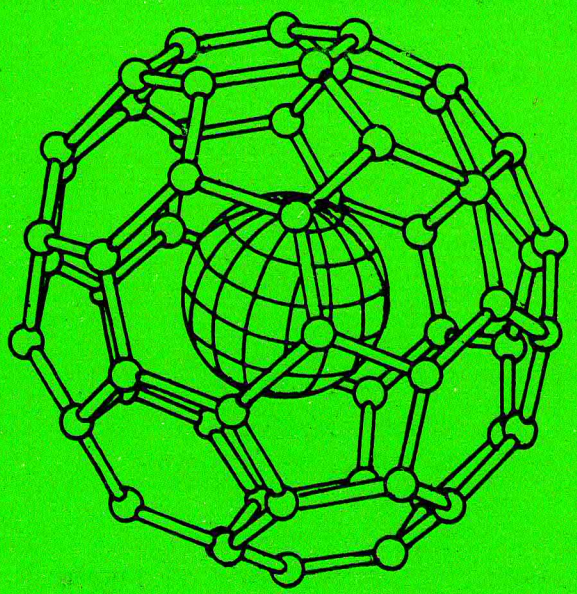

बक मिनिस्टर फुलरिन (C_{60}) के अणु का मॉडेल

हिंदी विज्ञान साहित्य परिषद

परिषद हिंदी में वैज्ञानिक साहित्य के सृजन व प्रचार हेतु नियमित रूप त्रैमासिक पत्रिका "वैज्ञानिक" का प्रकाशन, विज्ञान गोष्ठियों, वार्ताओं एवं अखिल भारतीय विज्ञान लेख प्रतियोगिता का आयोजन करती है।

एक जनवरी 1997 से परिषद की सदस्यता एवं "वैज्ञानिक" पत्रिका का शुल्क इस प्रकार है :

	परिषद सदस्यता (रु में)			वैज्ञानिक शुल्क (रु में)
	एक वर्ष	आजीवन	संरक्षक	एक वर्ष
व्यक्तिगत	50	400	5000	50
संस्थागत	100	1000		100

- "वैज्ञानिक" पत्रिका की कोई आजीवन सदस्यता / शुल्क नहीं है।
- वर्तमान नियमानुसार परिषद के सदस्यों को " वैज्ञानिक" नि:शुल्क भेजी जाती है।
- सभी शुल्क **हिंदी विज्ञान साहित्य परिषद** के नाम से केवल **डिमांड ड्राफ्ट (मुंबई)** द्वारा ही भेजें। **मुंबई** से बाहर के चैक, मनीआर्डर एवं पोस्टल आर्डर द्वारा भेजा शुल्क स्वीकार नहीं होगा।
- कृपया शुल्क से साथ अपना निजी विवरण इस पत्रिका में दिये गये आवेदन पत्र के प्रारूप के अनुसार भेजें।
- संरक्षक सदस्य, यदि चाहें तो, उनका एक विज्ञापन प्रतिवर्ष "वैज्ञानिक" में नि:शुल्क छापा जा सकता है।

"वैज्ञानिक" में विज्ञापन

हिंदी में प्रकाशित होने वाली विज्ञान पत्रिकाओं में "वैज्ञानिक" अग्रणी है। देश के सभी मुख्य वैज्ञानिक संस्थान इसके ग्राहक हैं। इस पत्रिका में आपके विज्ञापन आमंत्रित हैं। पूरे पृष्ठ की छपाई का आकार 16 सेमी X 21 सेमी है।

विज्ञापन की दरें	: एक अंक के लिए
अंतिम आवरण	: रु 2,500/-
दूसरा/तीसरा आवरण (अंदर)	: रु 2,000/-
पूरा पृष्ठ	: रु 1,500/-
आधा पृष्ठ	: रु 800/-

'हिंदी विज्ञान साहित्य परिषद' की वैज्ञानिक मोनोग्राफ प्रकाशन योजना

परिषद ने विज्ञान के विभिन्न विषयों पर लगभग दो सौ पृष्ठों के मोनोग्राफ प्रकाशित करने की एक योजना बनायी है। इसके अंतर्गत लेखन कार्य के लिए मानदेय देने का प्रावधान है परंतु प्रकाशित सभी पुस्तकों पर परिषद के सर्वाधिकार सुरक्षित रहेंगे। इस योजना की शुरुआत नाभिकीय ऊर्जा से संबंधित निम्नलिखित पहलुओं पर मोनोग्राफ तैयार करवाने से की जा रही है। विषय-विशेषज्ञों से पुस्तक की विस्तृत रू परेखाएं आमंत्रित हैं।

- ✱ नाभिकीय ऊर्जा के शांतिमय उपयोग
- ✱ नाभिकीय रिएक्टर
- ✱ नाभिकीय ईंधन
- ✱ भारी पानी
- ✱ आइसोटोप उत्पादन व उपयोग
- ✱ रेडियोसक्रिय विकिरण व उनके उपयोग
- ✱ नाभिकीय ऊर्जा एवं सुरक्षा
- ✱ नाभिकीय संरक्षण
- ✱ स्वचालन व रोबोटिकी

रूपरेखाओं का मूल्यांकन परिषद द्वारा गठित एक विशेष समिति करेगी। मूल्यांकन रिपोर्ट प्राप्त होने के बाद लेखक को परिषद के साथ लेखन कार्य संबंधी अनुबंध पर हस्ताक्षर करने होंगे। इस संबंध में अधिक जानकारी के लिए परिषद सचिव से निम्नलिखित पते पर संपर्क करें :- **श्री राम अवतार अग्रवाल, हिं. वि. सा. प. भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र, मुंबई - 400 085.**

अनुक्रमणिका

वैज्ञानिक

वर्ष 29 अंक 3

जुलाई - सितंबर 1997

व्यवस्थापन मंडल

श्री इंद्र कुमार शर्मा

डॉ. अशोक कुमार सूरी

श्री ललित कुमार

श्री कुलवंत सिंह

श्री एस. के. गुप्ता

संपादन मंडल

डॉ. गोविंद प्रसाद कोठियाल

श्री हरिओम मित्तल

डॉ. कैलाश चंद्र भल्ला

डॉ. राज नारायण पांडेय

श्री रामनाथ जिंदल

वार्षिक शुल्क

संस्थागत	व्यक्तिगत
100 रु	50 रु

शुल्क भेजने का पता

श्री एस. के. गुप्ता

रिएक्टर सुरक्षा प्रभाग,

कोषाध्यक्ष,

हिंदी विज्ञान साहित्य परिषद,

भा. प. अ. केंद्र, मुंबई - 400 085

संपादकीय 3

लेख

1. फूलरिन्स : रसायन शास्त्र का नया क्षितिज 5
   – डॉ. अनिल कुमार
2. खाद्य श्रेणी 'हैक्सेन' की उत्पादन प्रौद्योगिकी 10
   – भगत राम नौटियाल, डॉ. मोहनकृष्ण खन्ना, श्रीकांत नानोटी, ज्योत्सना नौथानी, गुरु प्रसाद, धर्मपाल एवं डॉ. बी. एस. रावत
3. संचार / प्रसार माध्यमों के बढ़ते कदम 14
   – डॉ. गोविंद प्रसाद कोठियाल
4. जीव विज्ञान द्वारा मुंबई के निकटवर्ती समुद्र तटीय प्रदूषण का अध्ययन 22
   – डॉ. शं. न. गजभिये एवं रमा शर्मा
5. समुद्री पर्यावरणीय प्रदूषण : एक सर्वेक्षण 26
   – डॉ. शं. न. गजभिये एवं डॉ. शि. शं. गजभिये
6. गुजरात अल्कलीज एंड केमिकल लि. द्वारा लखीगाम के तटीय पानी में अपशिष्ट मोचन का समुद्री पर्यावरण पर प्रभाव 31
   – मोरेश्वर म. सबनीस एवं अनिरुद्ध राम

टिप्पणियां

1. मनुष्य को प्रभावित करने वाले पशु-विषाणु रोग 35
   – डॉ. ए. बी. पांडेय एवं प्रियव्रत स्वाई
2. खेल स्पर्धाओं में औषधि-विज्ञान का बढ़ता दुरुपयोग 36
   – डॉ. अनिल कुमार शर्मा
3. 'माविस' घाव की नाप-जोख करेगा 38
   – तारिक अस्लम तस्नीम
4. हींग - वातनाशक घरेलू औषधि 40
   – एन. के. बौहरा
5. नेत्रदान - एक राष्ट्रीय आवश्यकता
   – श्री. वि. आगशे 41

● "वैज्ञानिक" में लेखकों द्वारा व्यक्त विचारों से संपादन मंडल का सहमत होना आवश्यक नहीं है ।
● "वैज्ञानिक" में प्रकाशित समस्त सामग्री के सर्वाधिकार हिं. वि. सा. परिषद के पास सुरक्षित हैं ।
● "वैज्ञानिक" एवं हिं. वि. सा. परिषद से संबंधित सभी विवादों का निर्णय मुंबई के न्यायालय में ही होगा ।

कार्यालय

"वैज्ञानिक", हिंदी विज्ञान साहित्य परिषद,
सूचना प्रभाग, सेन्ट्रल कांप्लेक्स
भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र
मुंबई - 400 085

"वैज्ञानिक" का शुल्क

पाठकों से अनुरोध है कि यदि उनका 'वैज्ञानिक' का शुल्क समाप्त हो गया हो, तो उसे भेज कर नवीनीकरण करा लें । यदि संभव हो तो आजीवन सदस्य बन जायें ।

6. स्वास्थ्य में तंत्रिका-जाल का प्रयोग 42
– विनोद कुमार मदान एवं बृजेश तिवारी

वैज्ञानिक-परिचय

माइकल फैराडे 45
– कृषिचयन

बाल विज्ञान

कैसे बनता है कुहरा ? 47
– डॉ. गणेश कुमार पाठक

विज्ञान कविता

पर्यावरण 48
– डॉ. अखिलेश्वर तिवारी

नाभिकीय ऊर्जा 48
– अविनाशी बरला

विज्ञान समाचार

● **भा. प. अ. केंद्र से** 49
● **संगोष्ठी समाचार** 51

हिं. वि. सा. परिषद का वार्षिक प्रतिवेदन 53

आजीवन सदस्यता / "वैज्ञानिक" ग्राहकों के लिए आवेदन पत्र का (प्रारूप)

डॉ. सतीश कुमार गुप्ता
कोषाध्यक्ष, हिंदी विज्ञान साहित्य परिषद, रिएक्टर सुरक्षा प्रभाग, भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र, मुंबई 400 085.

प्रिय महोदय

मैं, हिंदी विज्ञान साहित्य परिषद (भापअ केंद्र, मुंबई) का आजीवन सदस्य / "वैज्ञानिक" पत्रिका का ग्राहक बनने का इच्छुक हूं । मेरा निजी विवरण निम्नलिखित है :

नाम (हिंदी में) : _____ (अंग्रेजी में) : _____
पता (हिंदी में) : _____ (अंग्रेजी में) : _____
_____ _____
_____ _____
व्यवसाय : _____ _____
हिंदी की पात्रता : _____ प्रवीणता _____
(Qualification) (Specialisation)

डिमांड ड्राफ्ट सं. . . . . .दिनांक . . . . . बैंक . . . . . रु . . . . .
दिनांक : हस्ताक्षर :

*शुल्क 'हिंदी विज्ञान साहित्य परिषद' के नाम केवल डिमांड ड्राफ्ट (मुंबई) द्वारा ही कोषाध्यक्ष को भेजें।

संपादकीय

इलेक्ट्रॉन की खोज के सौ वर्ष तथा ट्रांजिस्टर के पचास वर्ष

अक्तूबर 1897 में जोसेफ जॉन थॉम्पसन ने 'फिलॉसॉफिकल मैगज़ीन" नामक शोध ग्रंथ में इलेक्ट्रॉन की खोज का ऐलान किया था। वस्तुत: 'इलेक्ट्रॉन' नाम थॉम्पसन द्वारा नहीं, बल्कि 1891 में, आइरिस भौतिकविज्ञ जी. जॉनस्टोन स्टोवी ने विद्युत की प्राकृतिक इकाई के लिए प्रयुक्त किया था। यह विद्युत की उस मात्रा के बराबर था जिसे किसी घोल में एक हाइड्रोजन परमाणु को मुक्त करने के लिए प्रवाहित करना पड़ा। जहां तक थॉम्पसन का प्रश्न है उन्होंने कैथोड किरणों के संबंध में "कार्पुसकल्स" की बात कही जो आवेशित कण पुंज थे। यदि देखा जाय तो पिछले 100 वर्षों में इसके अलावा दूसरी ऐसी कोई खोज नहीं हुई जिसका विज्ञान, तकनीकी तथा आम जीवन इतना अधिक प्रभाव पड़ा हो। इलेक्ट्रॉन विद्युत वाहक होने के साथ-साथ पढ़ने-लिखने जैसे कार्यों में भी बड़ी सफलता से प्रयुक्त हो रहे हैं। वर्तमान तकनीकी को ध्यान में रखा जाय तो इलेक्ट्रॉन पुंज के प्रयोग से इलेक्ट्रॉनिकी जगत में प्रयुक्त होने वाली युक्तियों (ट्रांजिस्टर, डायोड, प्रतिरोधक, कैपेसिटर इत्यादि) का न्यूनतम आमाप (साइज़), इलेक्ट्रॉन लीथोग्राफी द्वारा ही संभव लगता है।

यूरोप के वैज्ञानिकों के लिए गैसों में विद्युत विसर्जन (डिस्चार्ज), 1830 की एक जिज्ञासा उत्पन्न करने वाली घटना थी। उसके लगभग पचास वर्षों बाद थॉम्पसन ने कैंब्रिज विश्वविद्यालय की कैवेंडिश प्रयोगशाला में गैसीय डिस्चार्ज पर अपना प्रयोगात्मक कार्य शुरू किया जिसका उद्देश्य यह सिद्ध करना था कि कैथोड किरणों का आवेश ऋणात्मक है। हालांकि ज्यन पेरीन ने इसको पहले दर्शा दिया था परंतु उनके प्रयोग में कुछ कमियों के कारण संदेह बना रहा। पेरीन ने अपने प्रयोग में, आपस में एक दूसरे से विद्युतीय तौर पर अलग, दो सह अक्षीय धात्वुयी बेलनों को समतल (प्लेन) कैथोड के सामने रखा। प्रत्येक बेलन में एक छोटा छिद्र रखा था जहां से कैथोड किरणें गुजर सकें। बाहरी बेलन, धरातल विभव (ग्राउंड पोटेंशियल) पर रखा गया था। जब किरणें भीतरी बेलन से गुजरीं तो वहां पर रखे इलेक्ट्रोस्कोप से पता चला कि उसमें ऋणात्मक आवेश है। परंतु जब उन्हें चुंबकीय क्षेत्र में रखा तो आवेश का संसूचन नहीं हुआ जिससे संदेह उत्पन्न हो गया। 1897 में थॉम्पसन ने इसी प्रयोग को थोड़ा अलग तरीके से दोहराया। इससे यह पूर्णत: सिद्ध हो गया कि कैथोड किरणों में ऋणात्मक आवेश होता है। थॉम्पसन ने भी पेरीन की तरह दो सह अक्षीय और एक एक छिद्र वाले धातु बेलन लिये थे। भीतरी बेलन को इलेक्ट्रोमीटर से जोड़ा, जबकि बाहरी बेलन को भूमि (earth) से जोड़ दिया। परंतु इस प्रयोग में कैथोड किरणों को चुंबकीय क्षेत्र द्वारा विक्षेपित कर बेलनों के छिद्र पर लाया गया। जैसे ही किरणें छिद्र पर पड़ीं इलेक्ट्रोमीटर द्वारा ऋणात्मक आवेश की पुष्टि हुई। जब किरणों को और अधिक चुंबकीय क्षेत्र द्वारा विक्षेपित कर छिद्र से हटा दिया तो आवेश में कमी पायी गयी। इससे थॉम्पसन ने यह निष्कर्ष निकाला कि ऋणात्मक आवेश, कैथोड किरण पथ एवं दिशा का अनुसरण करता है।

कैथोड किरणें ऋणात्मक आवेशयुक्त हैं, इस पर कई प्रतिष्ठित वैज्ञानिकों की आशंका काफी समय तक बनी रही। इनमें महान वैज्ञानिक हेनरिच हट्र्ज का नाम भी आता है। इन्हें कैथोड किरणों पर विद्युत स्थैतिक क्षेत्र (electro-static field) लगाने पर विक्षेपण नहीं मिला। इसके समाधान हेतु थॉम्पसन ने हट्र्ज के प्रयोग को दोहराया तथा बताया कि हट्र्ज को जो विक्षेपण नहीं मिला उसका कारण यह था कि प्रयुक्त गैस में कैथोड किरणों से चालकता उत्पन्न हो जाती थी। परंतु थॉम्पसन ने जैसे ही गैस का दबाव कम किया तो विक्षेपण स्पष्टत: मिलने लगा। इस प्रकार इलेक्ट्रॉन को सर्वव्यापी मान्यता मिली।

इसके उपरांत थॉम्पसन ने यह जानने का प्रयास किया कि ये कार्पुसकल्स क्या हैं - कण, परमाणु, अणु अथवा अन्य सूक्ष्मकण ? इस प्रश्न का हल निकालने के लिए उन्होंने कैथोड किरण की मात्रा और उसके आवेश (m/e) का अनुपात निकालने के प्रयोग किये। उन्हें यह मान $(1.3 \times 0.2 \times 10^{-8})$ ग्रा./कूलंब मिला जबकि आज इसका अतिशुद्ध मान 0.56857×10^{-8} ग्रा./कूलंब है। इस दिशा में रॉबर्ट मिलिकन द्वारा 1909 में, शिकागो विश्वविद्यालय में शुरूकिया गया सुप्रसिद्ध ऑयल ड्रॉप प्रयोग अत्यंत महत्वपूर्ण पाया गया। उन्होंने थॉम्पसन के कार्पुसकल का आवेश तथा हाइड्रोजन आयन के आवेश को ध्यान में रखा और यह पाया कि कार्पुसकल की मात्रा हाइड्रोजन परमाणु की 1/1837.15 ग्राम

है जो कि आधुनिक मान (1996 के 'फिजिकल रिव्यू' में उल्लेखित) के अधिक करीब है। मिलिकन के ऑयल ड्रॉप प्रयोग के बाद नील बोहर (Neil Bohr) ने एक ऐसे सिद्धांत पर कार्य किया जिसके फलस्वरूप यह स्पष्ट हुआ कि इलेक्ट्रॉन एक मौलिक कण के साथ-साथ परमाणु का भी एक अंश है। इसके बाद आट्टो स्टर्न तथा वाल्थर गेरलेक के 1921 के प्रयोग से इलेक्ट्रॉन का अंतर्निहित चक्रण (Spin) तथा चुंबकीय घूर्ण (1 बोहर मैग्नेटॉन) का साक्ष्य (प्रमाण) मिला।

यही इलेक्ट्रॉन जब ठोस अवस्था इलेक्ट्रॉनिकी की एक अनमोल युक्ति 'ट्रांजिस्टर' में अपने कारनामें दिखाते हैं तो एक दम नवीन परिदृश्य एवं संकल्पना सामने आती है। अमेरीका की 'बेल प्रयोगशाला' के जॉन बार्डीन, वाल्टर ब्रिट्टेन एवं विलियम शाक्ले द्वारा 1948 में आविष्कृत ट्रांजिस्टर भी संयोग से पचासवां वर्ष पूरा कर रहा है। इस युक्ति की यात्रा पर भी कुछ नज़र डालें। इन पचास वर्षों में ट्रांजिस्टर कार्य प्रणालियों के आधार पर मुख्यत: दो वर्गों में विकसित हुए हैं; (1) द्विध्रुवीय ट्रांजिस्टर (Bipolar transistor) और (2) क्षेत्र प्रभाव ट्रांजिस्टर (Field Effect Transistor - FET)। पहले वर्ग में इलेक्ट्रॉन तथा होल दोनों आवेश वाहक भाग लेते हैं जबकि दूसरे वर्ग में केवल एक ही आवेश भाग लेता है जो विद्युत क्षेत्र द्वारा प्रभावित होता है। आज सिलकन (Si) तथा गैलियम आर्सेनाइड (GaAs) एवं संबंधित यौगिक ट्रांजिस्टर क्षेत्र में प्रतिस्पर्धात्मक भूमिका में सामने खड़े हैं। यह उल्लेखनीय है कि आज का 'वर्क हॉर्स' सिलिकन वह पहली अर्द्ध धातु नहीं थी जिससे ट्रांजिस्टर बनाया गया था। यह धातु थी जर्मेनियम जिसने 1960-62 तक अपना प्रभुत्व बनाये रखा। लगभग इसी समय निर्वात वाल्व का स्थान ट्रांजिस्टर ने लिया। यों भी आरंभ में विकास की गति काफी कम रही। ट्रांजिस्टर की खोज के लगभग 13 वर्ष बाद फेयर चाइल्ड ने पहला एकीकृत सर्किट तैयार किया जिसमें केवल चार घटक थे। परंतु अगले दो दशकों में विकास की गति में अप्रत्याशित तेजी आयी तथा लाखों घटकों वाले एकीकृत सर्किट बनाये जाने लगे।

यहां पर एक रोचक बात यह है कि पिछले 30 वर्षों में ट्रांजिस्टर का रैखिक आकार हर दो वर्ष में आधा होता गया। इस समय यह एक माइक्रोन से भी कम पहुंच चुका है और यही गति रही तो 2010 तक इसका साइज नैनोमीटर (10^{-9} सेमी.) तक पहुंचने की आशा है। इस स्केल पर क्वांटम प्रभाव प्रदर्शित होने लगते हैं अत: इन प्रभावों को ध्यान में रखते हुए वैज्ञानिक कार्य कर रहे हैं। उच्च इलेक्ट्रॉन गम्यता ट्रांजिस्टर (HEMT) इन्हीं शोधों का परिणाम है जिसमें इलेक्ट्रॉन की गम्यता (मोबिलिटी) लगभग 10^7 सेमी^{2}/ वोल्ट सेकंड तक प्राप्त हो चुकी है। ऐसी युक्तियों का उपयोग उच्च गति के कंप्यूटर, संसूचकों, संचार युक्तियों इत्यादि में हो रहा है। इसी प्रकार, हाल में विकसित क्वांटम वेल लेसर ट्रांजिस्टर एक महत्वपूर्ण उपलब्धि कही जा सकती है।

भविष्य में, ट्रांजिस्टर के लिए कौन सा पदार्थ उपयोगी रहेगा, यह एक विचारणीय प्रश्न है। जर्मेनियम की अपेक्षा सिलिकन, अपने उच्च प्रचालन ताप, कम लागत एवं उच्च कोटि के बड़े क्रिस्टल (~275 mm व्यास) की उपलब्धता के कारण उपयोगी माना जाता है परंतु इन युक्तियों की गति जर्मेनियम युक्तियों से लगभग आधी है। अन्य पदार्थों में गैलियम आर्सेनाइड और उसके मिश्रधातु से बने ट्रांजिस्टर अत्योच्य गति देने में समर्थ हैं परंतु उनकी लागत बहुत अधिक आती है। अत: उपभोक्ता इलेक्ट्रॉनिकी, एवं अन्य यंत्रों में उनका उपयोग व्यवहार्य नहीं लगता। ऐसी आशा है कि आने वाले समय में जर्मेनियम-सिलिकन (Ge_xSi_{1-x}) के संयोग से तैयार ट्रांजिस्टर काफी प्रचलित होंगे जिसमें सिलिकन की गैलियम डार्सेनाइड के मुकाबले अच्छी ऊष्मीय चालकता एवं जर्मेनियम की उच्च इलेक्ट्रॉन गम्यता का अपना महत्वपूर्ण योगदान रहेगा।

●

प्रस्तुत अंक वर्ष 1997 का जुलाई-सितंबर अंक है। इसमें अन्य लेखों एवं टिप्पणियों के साथ कुछ शोध पत्रों का भी समावेश किया है। प्रकाशन में चल रहे विलंब के लिए हमें अत्यंत खेद है। परंतु इससे भी अधिक खेद हमें पाठकों की उदासीनता पर है क्योंकि वे हमें अपनी प्रतिक्रियाओं से पता नहीं क्यों वंचित रख रहे हैं। इस पत्रिका के स्तर को उठाने में तथा इसे उपयोगी बनाने में आपकी भागीदारी बहुत ही महत्वपूर्ण है। हमारे प्रयासों की भी अपनी सीमाएं हैं अत: आपका सहयोग नितांत आवश्यक है।

डॉ. गोविंद प्रसाद कोठियाल

फूलरिन्स : रसायन शास्त्र का नया क्षितिज

डॉ. अनिल कुमार

वैज्ञानिक अधिकारी, प्रिफ्री (PREFRE) प्लांट,
भा. प. अ. केंद्र, तारापुर, पोस्ट-घिवली,
जिला-थाना - 401 502

प्रस्तुत लेख में फूलरिन्स रसायन से संबंधित वर्तमान अध्ययन के क्षेत्र जैसे, उच्च फूलरिन्स, C_{60} तथा C_{70} कार्बनिक एवं कार्बधात्विक रसायन, एन्ड्रोहेड्रल धातु यौगिक, अतिचालक एवं अर्धचालक धातुओं के यौगिकों इत्यादि पर प्रकाश डाला गया है। नव संश्लेषित एन्ड्रोहेडल यौगिक फूलरिन्स की खोज रसायन शास्त्र में एक महत्वपूर्ण क्षेत्र की शुरुआत कही जा सकती है। अत: यह एक सक्रिय शोध क्षेत्र बन पड़ा है जिसमें कई विजातीय परमाणुओं के साथ फूलरिन्स के संश्लेषण की परिकल्पना की जा रही है।

कुछ वर्षों पहले तक, कार्बन के केवल दो अपरूप हीरा व ग्रेफाइट, जिनके संरचनात्मक गुण ज्ञात हैं, ही प्रचुर मात्रा में उपलब्ध थे। तकनीकी रूप से ये पदार्थ अति-महत्वपूर्ण सिद्ध हुए हैं। ग्रेफाइट को ठोस स्नेहक, पेन्सिल एवं न्यूक्लीय भट्टी में मंदक के रूप में प्रयोग किया जाता है। हीरा, मुख्यत: अपनी कठोरता एवं अपवर्तनांक के लिए प्रख्यात है। इसका उपयोग आभूषण बनाने एवं अपरिष्कृत तेल उद्योग में ड्रिलिंग हेड के रूप में किया जाता है। कुछ वर्षों से हीरे की पतली फिल्म का उपयोग इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों तथा औजारों एवं पदार्थों पर रक्षण-परतों के रूप में होने लगा है। सभी प्रकार के दूसरे अविकसित कार्बन-जाल के बहुलकों के महत्वपूर्ण पदार्थीय गुणों के बारे में भविष्यवाणी की गयी है। नवसंश्लेषित फूलरिन्स के आविष्कार ने कार्बन परिवार को और भी संपूर्णता प्रदान की है। 1995 का रसायन शास्त्र का नोबेल पुरस्कार डॉ. हीथ क्रोटो ससेक्स यूनिवर्सिटी, यू. के.), डॉ. कर्ल ओ' ब्रायन एवं डॉ. स्माले (राइस यूनिवर्सिटी टेक्सास, यू. एस. ए.) को फूलरिन्स के संश्लेषण के लिए दिया गया। ये वैज्ञानिक जब किन्हीं अन्य अध्ययनों के लिए प्रयोग कर रहे थे, कई अन्य महत्वपूर्ण खोजों की तरह ही कार्बन के इस नये अपरूप - फूलरिन्स की खोज भी अचानक हो गयी। 1985 में जब क्रोटो, कर्ल व स्माले अंतरतारकीय स्थान एवं तारकीय वातावरण में लंबी श्रृंखला के कार्बन के अणु के निर्माण का अध्ययन कर रहे थे, तब उन्होंने विशेष परिस्थितियों में कार्बन के 60 परमाणुओं के गुच्छ के निर्माण का प्रेक्षण किया जो अप्रायिक रूप से प्रचुर मात्रा में मौजूद थे।

उनके इस सुझाव ने कि कार्बन के 60 परमाणुओं का यह गुच्छ खोखले गोले के रूप में हो सकता है, विश्व के अनेक वैज्ञानिकों का ध्यान इस तरफ आकर्षित किया। तब से रसायनशास्त्रियों तथा अन्य वैज्ञानिकों में भी समान रूप से फूलरिन्स की खोज के बारे में जिज्ञासा बनी हुई है। क्रोटो द्वारा 1985 में प्रस्तुत ऐतिहासिक शोध-पत्र के बाद, अचानक फूलरिन्स के संभावित धनायनों को लेकर अनुसंधान-कार्य काफी बढ़ गया, जिसमें बताया गया था कि कार्बन प्लाज्मा के नाभिकीकरण में C_{60} एक स्थायी उत्पाद है। फूलरिन्स से संबंधित सैकड़ों शोध-पत्र केवल 1991 में ही प्रकाशित हुए। अनेक आलोचनात्मक शोध-पत्र रासायनिक विज्ञान की पत्रिकाओं में प्रकाशित हुए तथा इसके अलावा अखबारों तथा पत्रिकाओं में जनसाधारण के लिए भी अनेक लेख छपे।

C_{60} का, नवस्थापित, पिंजड़े जैसी संरचना का खंडित आइकोसाहेड्रन आकार विशेष रूप से स्थायी है,

जिसे ग्रेफाइट के लेसर वाष्पीकरण द्वारा प्राप्त किया जाता है चूंकि इनकी संरचना तथा स्थिरता जियोडैसिक गुंबद से काफी मिलती जुलती है अत: जियोडेसिक गुंबद के लिए प्रसिद्ध अमेरिकी वैज्ञानिक 'बक-मिनिस्टर-फूलर' के सम्मान में C_{60} को 'बक-मिनिस्टर-फूलरिन्स' नाम दिया गया ।

बक-मिनिस्टर फूलरिन की आकृति एक फुटबाल की तरह होती है, जिसके 32 फलक होते हैं; जिसमें 20 षड़भुज एवं 12 पंचभुज होते हैं । प्रत्येक पंचभुज पांच षड़भुजों द्वारा घिरे रहते हैं और प्रत्येक षड़भुज तीन पंचभुजों द्वारा घिरे रहते हैं ।

पृथ्वी पर पाये जाने वाले तत्त्वों में, प्रचुरता के मामले में, कार्बन चौदहवें नंबर पर है तथा अंतरिक्ष में प्रचुरता के सोपान पर यह सोलहवें नंबर पर है । इसी कारण अनेक खगोल वैज्ञानिक कार्बन से संबंधित कई पहलुओं पर कार्य कर रहे हैं । अतएव इसमें कोई आश्चर्य नहीं है कि सर्व-प्रथम बृहत् रूप में कार्बन के इस तीसरे अपरूप, C_{60}, का निर्माण खगोल वैज्ञानिकों के एक दल ने किया था, जिसका नेतृत्व श्री वूल्फगैन्ग क्रेट स्कमर व श्री डोनाल्ड हॉफमैन ने किया था । 1990 में इन्हीं अनुसंधानकर्ताओं ने काजल से C_{60} का विलगन किया, जिसे ग्रेफाइट के अक्रिय वातावरण में गर्म करके बनाया गया था ।

C_{60} या दूसरे उच्च फूलरिन्स जैसे एक खोखले अणु को चित्र-1 में दर्शाया गया है । यद्यपि प्रकृति सदैव निर्वात का विरोध करती है, किंतु फूलरिन्स पिंजड़े के अंदर निर्वात होता है, जिसे अणु या परमाणु के संभाव्य पूरक द्वारा भरा जा सकता है । यद्यपि आवर्त सारणी के सारे तत्व C_{60} या दूसरे उच्च फूलरिन्स के पिंजड़े में बैठ सकते हैं, परंतु संभाव्य एन्डोहेड्रल यौगिकों की संख्या अधिक है । 1995 में ही हीथ और सहयोगियों ने यह बताया था कि C_{60} यौगिक का केंद्रीय कोष्ठ, व्यापक श्रेणी के अणुओं के लिए एक मजबूत बंधन स्थल होना चाहिए तथा उन्होंने एन्डोहेड्रल फूलरिन्स यौगिकों का गैसीय अवस्था में अध्ययन भी किया ।

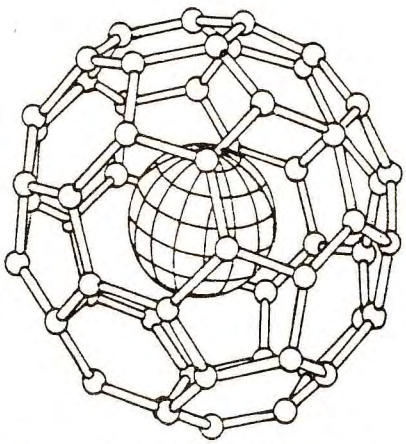

चित्र-1 : बक मिनिस्टर फूलरिन अणु के अंदर वास्तविक आकार की एक कोटर

फूलरिन्स से संबंधित अनुसंधान के लिए जो त्वरित कदम उठाये गये उनके पीछे मुख्य कारण था काजल और C_{60} व C_{70} की व्यापारिक रूप से उपलब्धता । क्रेट स्कमर हॉफमैन के मूल आर्क-रिएक्टर में सुधार होने से काजल की प्राप्त होने वाली मात्रा में बढ़ोतरी हुई तथा 99 प्रतिशत शुद्ध C_{60} या C_{70} का विलगन संभव हो गया है ।

फूलरिन्स रसायन से संबंधित वर्तमान अनुसंधान मुख्यत: चार क्षेत्रों में केंद्रित है :

i) उच्च फूलरिन्स का विलगन एवं उनका चरित्रीकरण,
ii) C_{60} व C_{70} का कार्बनिक एवं कार्बधात्विक रसायन,
iii) एन्डोहेड्रल धातु यौगिक, और
iv) अतिचालक एवं अर्धचालक धातुओं के यौगिक

उच्च फूलरिन्स :

द्रव्यमान स्पेक्ट्रम विश्लेषण से पता चलता है कि काजल में C_{60} के कार्बन गुच्छ से C_{350} के अतिगुच्छ तक होते हैं; यद्यपि अलग-अलग समूहों द्वारा, काजल से प्राप्त फूलरिन्स की उत्पाद लब्धि में भिन्नता होती है । एक समूह का दावा ऐसे काजल के उत्पादन का है जिसमें तकरीबन 26% भार से C_{60} व C_{70} तथा 14% उच्च-फूलरिन्स होते हैं । विशिष्ट फूलरिनों की सांद्रता में कमी ही उच्च फूलरिनों के विलगन में प्रमुख समस्या है तथा जैसे-जैसे अणु भार बढ़ता है फूलरिनों की विलेयता में कमी होती जाती है ।

बहुत से उच्च फूलरिन जैसे C_{76}, C_{78}, C_{84}, C_{90} को पहचान कर उनका लाक्षिणीकरण किया जा चुका है। यद्यपि जैसे-जैसे गुच्छ बड़ा होता जाता है ज्यामितीय समायवों की संख्या तेजी से बढ़ती है, परंतु उनमें कुछ समावयवों की ही अधिकता होती है।

C_{60} व C_{70} का कार्बनिक एवं कार्बधात्विक रसायन :

C_{60} व C_{70} कार्बनिक एवं कार्बधात्विक रसायन अभी अपने शैशवावस्था में है। पूर्वानुमान यह था कि C_{60} बेंजीन वलय का एक अक्रिय खोखली गेंद है, परंतु इसके विपरीत C_{60} का अणु रासायनिक रूप से एलकीन या एरीन की तरह व्यवहार करता है। कम संयोजकता वाले संक्रमण तत्त्व, C_{60} से क्रिया करके विविध प्रकार के सम्मिश्र बनाते हैं, जिन्हें साधारणतया निम्न सूत्र से प्रदर्शित करते हैं -

$[(R_3P)_2M]_x(n^2\text{-}C_{60})$

जहां $x = 1$ से 6 तक एवं

M = नाइट्रोजन, पैलेडियम, प्लेटिनम आदि।

अभिक्रियाशील कार्बनिक खंड जैसे एल्काइल्स, कार्बिन्स व कार्बाइन्स, फूलरिनों के पिंजड़े को बांधकर अनूठे कार्बनिक यौगिकों का समूह बना सकते हैं। विद्युत-रासायनिक आंकड़े यह सुझाते हैं कि उच्च फूलरिनों के रासायनिक गुण C_{60} व C_{70} के रासायनिक गुणों से काफी भिन्न हैं, जिससे कि इसके अलेखित रसायन के व्यापक परिदृश्य का पता चलता है। 'चाइरिल फूलरिन्स' के आविष्कार से एक और आकर्षक एवं महत्वपूर्ण अनुसंधान के क्षेत्र का पता चला है।

C_{60} अपचयन एवं उपचयन दोनों तरह की अभिक्रियाओं में भाग ले सकता है। बक-मिनिस्टर-फूलरिन्स रासायनिक व विद्युत रासायनिक विधि द्वारा अपचयित होकर C^{n-}_{60} प्रकार के फूलराइड्स बनाते हैं। विद्युत-रासायनिक आंकड़ों से ज्ञात होता है कि फूलरिन्स के गोले द्वारा 6 इलेक्ट्रॉन ग्रहण किये जा सकते हैं।

C_{60} की फ्लोरिनीकरण अभिक्रिया द्वारा बहुत से उत्पाद प्राप्त होते हैं जिनमें मुख्यत: $C_{60}F_{60}$ हैं। C_{60} की क्लोरिनीकरण एवं ब्रोमनीकरण अभिक्रियाओं द्वारा विभिन्न प्रकार के परहैलोजनेटेड उत्पादों की प्राप्ति होती है जैसे $C_{60}Br_x$ जहां $x = 4, 8, 24$। आश्चर्यजनक रूप से हैलोजनीकरण अभिक्रिया उत्क्रमणीय है। ब्रोमीनीकृत फूलरिन्स को गर्म करने पर वापस C_{60} की प्राप्ति होती है, जिससे इस आशय को बल मिलता है कि हैलोजनीकरण अभिक्रिया में फूलरिन्स का पिंजड़ा अक्षुण्ण बना रहता है।

एन्डोहेड्रल धातु के सम्मिश्र :

बहुत से ऐसे साक्ष्य प्राप्त हुए हैं जिससे ज्ञात होता है कि धातुओं के परमाणु फूलरिनों में तब संपुटित हो जाते हैं जब आयन-साइक्लोट्रॉन के चुंबकीय ट्रैप का आयन के अनुनाद के साथ प्रयोग किया जाता है। ये ट्रैप्ड आयन $K@C_{60}^+$, $Cs@C_{60}^+$ और $La@C_{60}^+$ के प्रकार के होते हैं और पृष्ठ-भूमि गैसों जैसे हाइड्रोजन, ऑक्सीजन, नाइट्रोजन के ऑक्साइड व अमोनिया के साथ अभिक्रिया नहीं करते हैं। [एन्डोहेड्रल फूलरिन्स के चिन्हांकन एवं नामकरण के लिए नयी पद्धति का विकास किया गया जिसमें @ प्रतीक का प्रयोग किया गया। सूत्र में @ के बायीं तरफ का तत्त्व दायीं तरफ के फूलरिन्स के पिंजड़े के अंदर होता है]। इससे व्यक्त होता है कि अतिक्रियाशील धातुओं के परमाणु के वातावरण में व्याप्त कम घनत्व वाली गैसों से रक्षा हो जाती है। इन परिणामों से एक 'सुपर - परमाणु' की अवधारणा का जन्म होता है जिसमें कि पिंजड़े के अंदर का परमाणु, पिंजड़े से आवेश दे सकता है या ग्राह्य कर सकता है, जिससे कि धन आवेशित या ऋण आवेशित पिंजड़े की प्राप्ति होती है। इस प्रकार से प्राप्त ठोस पदार्थों से अनेक नयी संभावनाओं का पता चलता है, जिनके मुख्य कारण निम्न हैं :

(1) C_{60} विद्युतरोधी होता है जिसमें 1.5 इलेक्ट्रॉन वोल्ट का बैंड अंतराल होता है; एन्डोहाइड्रल धातुओं के संपुटन से यह विद्युत चालक हो जाता है। जिसे इसकी 'डोपिंग-विधि' की समानता के कारण 'डोपी-बॉल' भी कहते हैं।

(2) एन्डोहाइड्रल धातु फूलरिन्स प्रथम त्रिआयामी कार्बनिक सुचालक है, जिससे इनके प्रकाशीय एवं इलेक्ट्रॉनिक स्विच के रूप में प्रयोग के लिए अतिरिक्त आयाम मिलता है।

अनुसंधानकर्ताओं को बहुत पहले ही ज्ञात हो गया था कि C_{60} की खाली क्रोड़ में अधिकतर धातु-अणुओं को समायोजित करने के लिए स्थान होता है। द्रव्यमान स्पेक्ट्रमदर्शी द्वारा $La@C_{82}$ की पहचान के बाद बहुत सारे एन्डोहेड्रल धातु यौगिकों की पहचान हुई जिनमें मुख्यत: Cs, Zr, Hf, Ti, U, Sc, Y, He थे। इनके अतिरिक्त बहुत से संपुटित धातु गुच्छों की भी पहचान हुई जैसे $Sc_3@C_{82}$ और $Sc_2@C_{80}$। यूरेनियम C_{32} के साथ स्थायी एन्डोहेड्रल यौगिक बनाता है। आर्क पद्धति द्वारा काजल के निर्माण से पहले धातु यौगिकों का निर्माण ग्रेफाइट छड़ों को उसके लवण से संसेचित कर होता था।

इन एन्डोहेड्रल यौगिकों के निर्माण की क्रिया-विधि भी विशेष अभिरुचि का विषय है क्योंकि कार्बन वाष्प के संघनन में 'सांचा-प्रभाव' कार्य करता है। लैन्थेनम लवण से संसेचित ग्रेफाइट छड़ द्वारा प्रमुखत: $La@C_{82}$ यौगिक प्राप्त होता है और लैन्थेनम लवण की अनुपस्थिति में C_{82} का निर्माण बहुत ही कम होता है, लेकिन तांबा, चांदी, सोना और लोहे के यौगिकों का इस विधि द्वारा निर्माण का प्रयास अभी असफल रहा है।

निम्न संयोजकता वाली संक्रमण धातुओं के यौगिक अपर्याप्त इलेक्ट्रॉन वाले एलकीन्स या एरीन्स के साथ बंधन बनाते हैं। जब, $[(C_6H_5)_3P]_2Pt(n^2\text{-}C_2H_4)$ प्रकार के यौगिक चुंबकीय संतुलित विलयन के संपर्क में आता है तो विलयन का रंग तुरंत ही मरकत हरा हो जाता है एवं काले रंग का एक क्रिस्टलीय यौगिक इस विलयन से अवक्षेपित हो जाता है। टेट्राहाइड्रोफूरान के पुन: क्रिस्टलीकरण के द्वारा एक यौगिक $[(C_6H_5)_3P]_2Pt$ $(n^2\text{-}C_{60})$ प्राप्त होता है।

$$\left.\begin{matrix} Ph_3P: \\ Ph_3P: \end{matrix}\right\} Pt \leftarrow \begin{matrix} CH_2 \\ \| \\ CH_2 \end{matrix} + C_{60} \xrightarrow[\text{25° सेंग्रे. (2 घंटा)}]{\text{- }CH_2=CH_2\text{, टॉल्यून}} \left.\begin{matrix} Ph_3P: \\ Ph_3P: \end{matrix}\right\} Pt \leftarrow C_{60}$$

फूलरिन्स C_{60} के एन्डोहेड्रल प्लेटिनम यौगिक की संरचना चित्र-2 में दर्शायी गयी है। चित्र -3 में पैलेडियम के साथ एन्डोफूलरिन्स यौगिक की संरचना दिखायी गयी है।

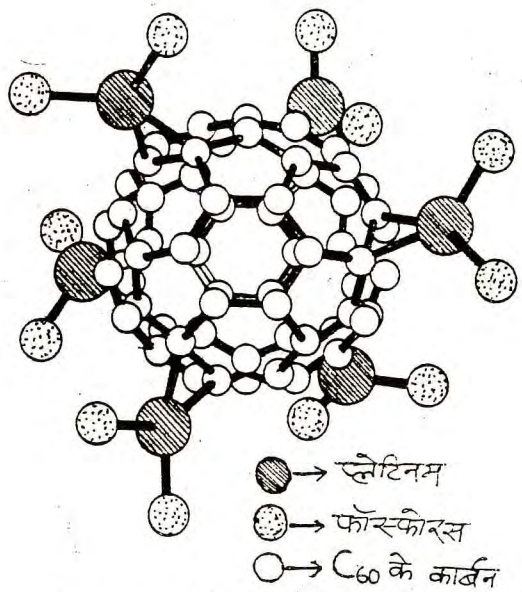

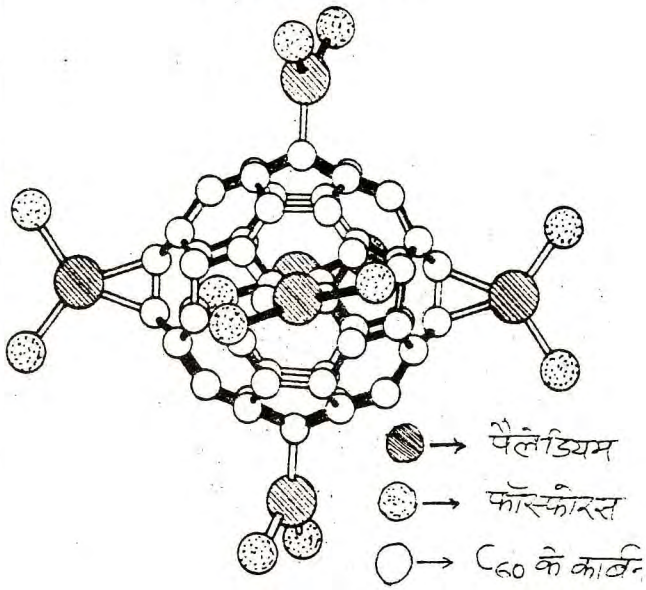

चित्र-2 : $[(Et_3P)_2Pt]_6\ C_{60}$ यौगिक की त्रिआयामी संरचना

चित्र-3 : $[(Et_3P)_2Pd]_6\ C_{60}$ यौगिक की द्विआयामी संरचना

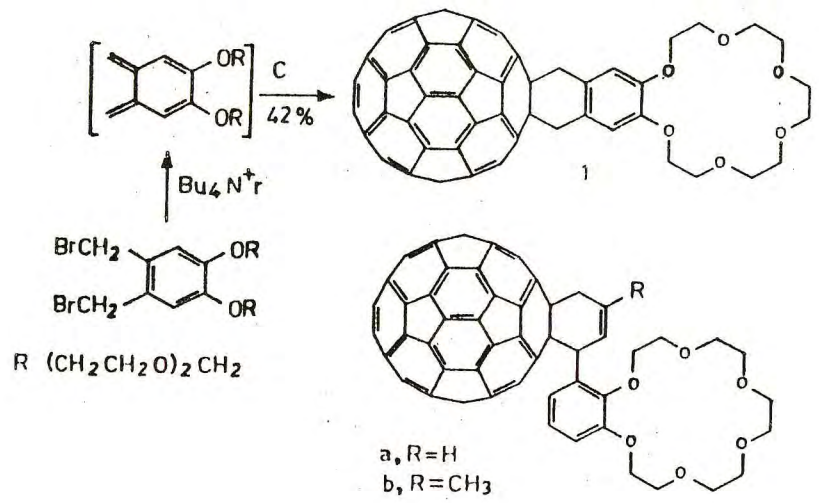

चित्र-4 : 'डाइल्स-एल्डर' अभिक्रिया द्वारा C_{60} के क्रॉउन-ईथर के साथ व्युत्पन्न

$U@C_{28}$ एक महत्त्वपूर्ण एन्डोहेड्रल यौगिक है। वास्तव में C_{28}, लेसर -वाष्पीकरण पद्धति से पराध्वनिक गुच्छ पुंज द्वारा प्राप्त सबसे छोटा फूलरिन्स प्रतीत होता है। प्रकाशीय खंडन प्रयोगों से ज्ञात होता है कि आंतरिक यूरेनियम C_{28} को बहुत मजबूत स्थायित्व प्रदान करता है। प्रकाश उत्सर्जी स्पेक्ट्रम द्वारा ज्ञात होता है कि $U@C_{28}$ में यूरेनियम की संयोजकता चार है। $U@C_{28}$ बृहत् मात्रा में, लेसर या आर्क विधि से यूरेनियम - ग्रेफाइट छड़ के वाष्पीकरण द्वारा प्राप्त किया जा सकता है और यह वायु और पानी में भी उर्ध्वपातित फिल्म के रूप में स्थायी रहता है। यह गुच्छ हीरे के आकार का ठोस प्रदान करता है।

क्राउन ईथर के व्युत्पन्नों a, b का भी निर्माण, 'क्राउन ईथर प्रतिस्थापित डाइन्स' के प्रयोग से डायल्स-एल्डर विधि द्वारा होता है। क्राउन ईथर से ग्रथित साइक्लोप्रोपेनो फूलरिन्स और फूलराइड्स का भी निर्माण किया जा चुका है। यह व्यवस्था चित्र-4 में प्रदर्शित है।

एन्डोहेड्रल धातु यौगिकों से यह अवसर प्राप्त हुआ कि धातु परमाणुओं को अलग करके अगम्य वातावरण में उनका अध्ययन किया जा सके। धातु परमाणु अनिवार्यतः व्यवस्थित रहते हैं और फूलरिन्स पिंजड़े को सुरक्षित रखते हैं क्योंकि वे विलायक व लिगेन्ड से मुक्त होते हैं। ये यौगिक या तो अघुलनशील होते हैं या उनके भौतिक गुण धातु मुक्त फूलरिन्स की तरह होते हैं। इनके विलगन की विधि का विकास होना बाकी है। स्पेक्ट्रम वैज्ञानिक और सांश्लेषिक रसायनज्ञ आतुरतापूर्वक शुद्ध एन्डोहैड्रल धातु यौगिकों की उपलब्धता की प्रतीक्षा समान रूप से कर रहे हैं।

फूलरिन्स के अतिचालक धातु यौगिक :

फूलरिन्स के अतिचालक धातु यौगिकों की खोज ने कार्बनिक रसायन के क्षेत्र में उल्लेखनीय विस्तार किया है। क्षार धातुओं की वाष्प की C_{60} से अभिक्रिया द्वारा $[A_{3-x}B_xC_{60}]$ प्रकार के यौगिक की प्राप्ति होती है, जहां

(शेष पृष्ठ -13 पर देखें)

खाद्य श्रेणी 'हैक्सेन' की उत्पादन प्रौद्योगिकी

भगत राम नौटियाल, डॉ. मोहनकृष्ण खन्ना,
श्रीकांत नानोटी, ज्योत्सना नैथानी,
गुरु प्रसाद, धर्मपाल एवं डॉ. बी. एस. रावत

भारतीय पेट्रोलियम संस्थान, देहरादून 248 005

भारतीय पेट्रोलियम संस्थान द्वारा खाद्य तेलों के निष्कर्षण के लिए निष्कर्षक के रूप में 'हैक्सेन' नामक पेट्रोलियम उत्पाद के प्रयोग से संबंधित नयी प्रौद्योगिकी विकसित की गयी है। खाद्य श्रेणी हैक्सेन की उत्पादन प्रौद्योगिकी के विकास से इसके आयात में कटौती हुई है। इस लेख में प्रौद्योगिकी के लाभ तथा अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर उत्पाद की गुणवत्ता बनाये रखने की क्षमता आदि की विस्तृत जानकारी दी गयी है।

खाद्य तेल या वनस्पति तेल बीजों से प्राप्त होता है। तेल को बीजों से पृथक करने के लिए कोल्हू अथवा पिराई मशीनों के अलावा विलायक निष्कर्षण (सॉल्वेन्ट एक्सट्रेक्शन) विधि का भी प्रयोग होता है। आज विलायक निष्कर्षक विधि का प्रयोग बृहद् स्तर पर हो रहा है। इस विधि में निष्कर्षक (एक्सट्रैन्ट) के रूप में एक पेट्रोलियम उत्पाद; खाद्य श्रेणी 'हैक्सेन' का प्रयोग होता है।

खाद्य श्रेणी हैक्सेन, भारतीय मानक ब्यूरो के निर्धारित मानकों के अनुसार पेट्रोलियम से प्राप्त 63-69° सें. हैक्सेन अंश हैं जिसमें एरोमैटिक (बेन्जीन) हाइड्रोकार्बनों की मात्रा अधिक से अधिक एक प्रतिशत हो।

विलायक निष्कर्षण विधि से वनस्पति तेलों को अलग करने के लिए बीजों को कूटकर हैक्सेन के साथ उबाला जाता है, वनस्पति तेल का अंश हैक्सन में घुल जाता है। खली को पृथक करने के पश्चात हैक्सेन-तेल मिश्रण को पुनः उबाला जाता है। 60-70° सें. के मध्य हैक्सेन अंश पृथक हो जाता है और पुनः प्राप्त कर लिया जाता है, शेष बचा रहता है वनस्पति तेल।

"खाद्य श्रेणी" नाम क्यों ?

हैक्सेन में बेन्जीन कुछ न कुछ मात्रा में अवश्य उपस्थित रहता है, बेन्जीन स्वास्थ्य के लिए बहुत हानिकारक है। बेन्जीन के वातावरण में काम करने वाले कर्मियों को कैन्सर हो सकता है। विलायक निष्कर्षण विधि में हैक्सेन प्रयुक्त होता है तो स्वाभाविक है कि एरोमैटिक (बेन्जीन) का कुछ न कुछ अंश (नगण्य मात्रा में सही) वनस्पति तेलों में रहेगा। यह मात्रा सहनीय सीमा को पार न करें, इसके लिए भारतीय मानक ब्यूरो (BIS) ने मानदंड निर्धारित किये हैं। खाद्य तेलों के निष्कर्षण के लिए प्रयुक्त विशिष्ट पेट्रोलियम अंश को 'खाद्य श्रेणी हैक्सेन' नाम दिया गया है।

पेट्रोलियम से "खाद्य श्रेणी हैक्सेन" अंश प्राप्त करने के लिए तीन विधियां प्रमुख हैं :

1. ओलीयम उपचार प्रक्रम (ओलीयम ट्रीटमेन्ट प्रॉसेस)
2. निष्कर्षी आसवन (एक्सट्रेक्टिव डिस्टिलेशन)
3. विलायक निष्कर्षण

ओलीयम ट्रीटमेन्ट प्रक्रम :

इस प्रक्रम में ओलीयम का प्रयोग करके एरोमैटिक हाइड्रोकार्बन पृथक कर लिये जाते हैं। हिंदुस्तान पेट्रोलियम कॉर्पोरेशन (HPCL) मुंबई में इस विधि का उपयोग हो रहा है। भारत पेट्रोलियम कॉर्पोरेशन (BPCL) मुंबई में भी, कुछ साल पूर्व तक, इस विधि का प्रयोग किया जाता था। यहां पर संभरण (फीड) के रूप में मध्य पूर्व अरब से प्राप्त लाइट इरानियन (63-

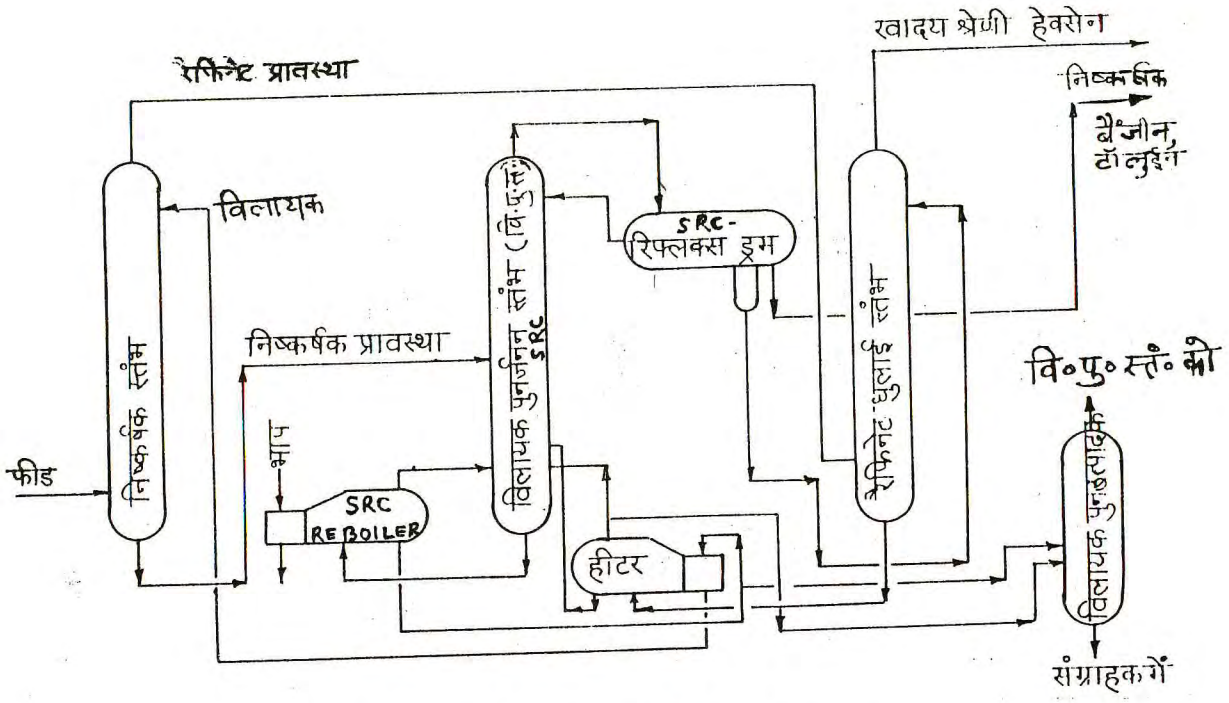

प्रक्रम-प्रवाह चित्र : खाद्य हैक्सेन उत्पादन

69° सें) अंश प्रयुक्त होता था। इस अंश में एरोमैटिक हाईड्रोकार्बनों की सांद्रता करीब 4 प्रतिशत है। इस विधि से संयंत्र में एक प्रतिशत से कम एरोमैटिक वाला उत्पाद प्राप्त करने के लिए जटिल प्रक्रम की आवश्यकता होती थी, बॉम्बे हाई नैप्था में हैक्सेन अंश प्रचुर मात्रा में मिलता है। जब इस संयंत्र में बॉम्बे हाई नेप्था वाला हैक्सेन अंश (एरोमैटिक 14-15 प्रतिशत) प्रयुक्त किया गया तो उत्पाद की गुणवत्ता अनुरक्षित न हो सकी। संयंत्र के प्रबंधकों ने सभी प्रकार के उपायों को अपनाया लेकिन हैक्सेन का उत्पादन न हो सका। इस समस्या को लेकर रिफाइनरी प्रबंधकों ने देहरादून के भारतीय पेट्रोलियम संस्थान से संपर्क किया। भा. पे. संस्थान के इस क्षेत्र के वैज्ञानिकों ने इसे चुनौती के रूप में लिया।

निष्कर्षी आसवन :

इस विधि में किसी उच्च ध्रुवीय विलायक का प्रयोग करके एरोमैटिक पृथक कर लिये जाते हैं। इस प्रक्रम में ऊर्जा की अधिक खपत होती है तथा उत्पाद की गुणवत्ता अनुरक्षित रखने में भी कठिनाई होती है।

विलायक निष्कर्षण प्रक्रम (देशज प्रौद्योगिकी का विकास) :

एरोमैटिक निष्कर्षण में विशेषज्ञता के चलते, सर्वप्रथम बॉम्बे हाई नैप्था हैक्सेन अंश व लाइट इरानियन अंश का विस्तृत विश्लेषण किया गया। इस विषय पर उपलब्ध साहित्य के गहन अध्ययन के साथ-साथ विभिन्न विलायकों/निष्कर्षकों के रासायनिक एवं भौतिक गुणों का भी अध्ययन किया गया। बेन्जीन - साइक्लोहैक्सन, बेन्जीन हैक्सेन आदि प्रतिदर्शों (मॉडल हाइड्रोकार्बन - मिक्सचर्स) तथा उपयुक्त विलायकों जैसे सल्फोलेन आदि को लेकर द्रव-द्रव निष्कर्षण से संबंधित विभिन्न प्रयोग दोहराये गये। निष्कर्षण स्तंभ में विलायक ऊपर से नीचे की ओर तथा फीड नीचे से ऊपर की ओर (प्रतिधारा-निष्कर्षण) प्रवाहित करते हुए निश्चित तापक्रम रखते हुए क ई प्रकार से प्रयोगों को कार्यरूप दिया गया। निष्कर्षण के पश्चात रैफिनेट - प्रावस्था से जल का प्रयोग करके

विलायक को अलग कर, रैफिनेट को विलायक रहित किया गया। रैफिनेट हाइड्रोकार्बन में बेन्जीन की मात्रा 1 प्रतिशत से कम सुनिश्चित की गयी। द्रव-द्रव निष्कर्षण के इस प्रकार के प्रयोग काफी खर्चीले होते हैं और प्रयोगों से लेकर प्रतिदर्शों के विश्लेषण तक काफी जटिल प्रक्रिया से गुजरना होता है। समय भी अधिक लगता है, अधिक जनशक्ति की आवश्यकता होती है। इस प्रौद्योगिकी का प्रक्रम-विवरण (प्रॉसेस पैकेज) बनाने के लिए ई. आइ. एल. दिल्ली का सहयोग लिया गया। इस प्रकार भा. पे. सं. एवं ई. आई. एल. की एक नयी प्रौद्योगिकी "सल्फोलेन, विलायक आधारित खाद्य श्रेणी हैक्सेन' उत्पादन का देश में पहली बार अवतरण हुआ।

जनवरी 1990 में इस देशज प्रौद्योगिकी पर आधारित एक संयंत्र, भारतीय पेट्रोलियम कॉर्पोरेशन लि. (BPCL) मुंबई में आरंभ कर दिया गया। "सल्फोलेन विलायक आधारित खाद्य श्रेणी हैक्सेन उत्पादक" यह संयंत्र फीड के रूप में बॉम्बे हाई नेप्था, 50-115 °सें. अंश का प्रयोग करते हुए सुचारु रूप से कार्य कर रहा है। प्रौद्योगिकी मूलतः विएरोमैटिकीकरण (डिएरोमैटाइजेशन) प्रक्रम पर आधारित है और संभरण (फीड) में 4 प्रतिशत से 30 प्रतिशत तक एरोमैटिकों को आसानी से पृथक करने में सक्षम है।

इसी प्रौद्योगिकी पर आधारित एक अन्य बृहत इकाई, मद्रास रिफाइनरी लि. (MRL) चेन्नई के तत्वावधान में मई 1992 को आरंभ की गयी, इस संयंत्र में भी खाद्य श्रेणी हैक्सेन का उत्पादन संतोषजनक रूप से चल रहा है। इसी प्रौद्योगिकी पर आधारित एक अन्य इकाई - हिंदुस्तान पेट्रोलियम कॉर्पोरेशन लिमिटेड (HPCL) मुंबई में भी स्वीकृत हो चुकी है। जिसकी उत्पादन क्षमता सबसे अधिक अर्थात 70,000 टन प्रति वर्ष होगी। अनुमान है कि इस संयंत्र के स्थापित होते ही देश खाद्य श्रेणी हैक्सेन के उत्पादन में न केवल आत्म-निर्भर बन सकेगा अपितु निर्यात करने की स्थति में भी होगा।

प्रौद्योगिकी अनुसंधान एवं विकास में अनवरत प्रयत्नशील रहते हुए इसी उत्पाद के उत्पादन की एक अन्य प्रौद्योगिकी "एन-मिथाईल पाइरोलिडोन (NMP)" विलायक आधारित, खाद्य श्रेणी हैक्सेन उत्पादन प्रौद्योगिकी भारतीय पेट्रोलियम संस्थान द्वारा विकसित की जा चुकी है। इस प्रौद्योगिकी को भा. पे. संस्थान के वैज्ञानिकों एवं अभियंताओं ने प्रयोगशाला से लेकर प्रक्रम विन्यास विवरण (प्रॉसेस पैकेज) तक संपूर्ण रूप से बिना किसी बाहरी संस्था के सहयोग के विकसित किया है। इस प्रौद्योगिकी की विशेषता यह है कि पूंजी निवेश समान रहते हुए, सल्फोलेन आधारित प्रौद्योगिकी के सापेक्ष इकाई की कुल उत्पादन क्षमता में 30 प्रतिशत से अधिक की वृद्धि होती है। निष्कर्षण एवं अन्य सभी प्रक्रियाएं निम्न ताप व सामान्य दाब पर संपन्न होती हैं।

भारत पेट्रोलियम कॉर्पोरेशन लि. मुंबई सल्फोलेन के स्थान पर एन. एम. पी. आधारित प्रौद्योगिकी के परिवर्तन को स्वीकृति दे चुका है।

खाद्य श्रेणी उत्पादन प्रौद्योगिकी के दोनों संयंत्रों में अपनाये जाने से जहां एक ओर उत्पादन में आशातीत वृद्धि हुई है वहीं दूसरी ओर ओलीयम ट्रीटमेन्ट प्रक्रम की जटिलताओं/कमियों से छुटकारा मिला है।

विलायक निष्कर्षण प्रौद्योगिकी के लाभ :

ओलीयम उपचार प्रक्रम में कमियों के विपरीत विलायक निष्कर्षण विधि में कई लाभ निहित होते हैं, कुछ प्रमुख लाभ निम्न प्रकार से हैं :

1. संभरण (फीड) में ऐरोमैटिक कितनी भी सांद्रता तक उपस्थित हो उत्पादन की गुणवत्ता पर कोई अंतर नहीं आता।
2. प्रयुक्त विलायक अधिकांशतः उदासीन (या एपरोटिक) होते हैं, अतः प्रयुक्त उपकरणों में क्षरण न्यूनतम होता है।
3. ओलीयम उपचार प्रक्रम की भांति संभरण या विलायक को निर्जलीकृत करने की आवश्यकता नहीं होती अतः उत्पादन मूल्य में कमी होना स्वाभाविक है।

4. विएरोमैटिकीकृत हैक्सेन उत्पाद होता है। पृथक हुए एरोमैटिक विलायक में घुले रहते हैं, एजोट्रोपिक आसवन विधि द्वारा सह उत्पाद के रूप में ऐरोमैटिक भी प्राप्त कर लिये जाते हैं। एरोमैटिकों (बेन्जीन आदि) की संसार भर में अत्यधिक मांग है। हमारे देश में अभी भी अल्प मात्रा में बेन्जीन का आयात करना पड़ता है। अतः ओलीयम उपचार विधि में जहां यह सह-उत्पादन व्यर्थ हो जाता है वहीं इस देशज प्रौद्योगिकी में सह-उत्पाद मूल्यवान उत्पाद के रूप में प्राप्त होता है। तथा व्यर्थ निस्तारण (वेस्ट डिस्पोजल) की समस्या नहीं होती।

5. अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर खाद्य श्रेणी हैक्सेन में बेन्जीन की मात्रा 100 पी. पी. एम. पुनः निर्धारित की जा चुकी है। अंतर्राष्ट्रीयकरण के चलते तथा उत्पादन को निर्यातोन्मुखी बनाने हेतु भारत में इसके मानदंड परिवर्तित करने होंगे। उत्पादन की गुणवत्ता 100 पी. पी. एम. एरोमैटिक तक लाने में ओलीयम उपचार नितांत अक्षम है। भा. पे. संस्थान द्वारा विकसित एन. एम. पी. प्रौद्योगिकी एरोमैटिकों को 40 पी. पी. एम. की सीमा तक लाने में पूर्ण सक्षम है। अतः विलायक निष्कर्षण प्रौद्योगिकी ही अब एक मात्र उपाय है।

❑❑❑

फूलरिन्स : रसायन शास्त्र का नया क्षितिज

(पृष्ठ -9 का शेष भाग)

A और B = K, Rb, Cs। धातु फूलराइड्स को C_{60} के टॉल्यून विलयन से निश्चित मात्रा में क्षार धातुओं से संशोधित करके भी प्राप्त किया जा सकता है।

धातु फूलराइड्स, साधारणतया C_{60}^{3-}, फलक-केंद्रित घनाकृति C_{60} में, क्षार धातु दो खाली टेट्राहेड्रल स्थान पर तथा एक खाली आक्टोहेड्रल स्थान पर होते हैं पदार्थ का क्रांतिक-ताप-परिसर करीब 18 केल्विन से, अभी तक के घोषित अधिकतम मान, तक होता है, और $Rb_xTl_yC_{60}$ प्रकार के यौगिकों के लिए 45 केल्विन। क्षार धातु फूलराइड्स कार्बनिक अतिचालकों के एक नये युग का निरूपण करते हैं, एवं भविष्य में बहुत से नये धातु-फूलरिन, ग्रुप-I के अतिरिक्त प्राप्त होने की संभावना है।

कम संयोजकता, इलेक्ट्रॉन-समृद्ध, संक्रमण धातुओं के समूह जैसे लेन्थेनाइड, एक्टीनाइड और मुख्य-वर्ग के धातु समूह के यौगिक ज्ञात हैं जो फूलरिन्स एवं उसके व्युत्पन्नों के साथ अभिक्रिया करते हैं एवं बंधन बनाते हैं। बहुत सी धातुओं के वाष्प भी अभिक्रिया करते हैं, उदाहरणार्थ इस विधि से अति चालकों का निर्माण।

फूलरिनों एवं उससे संबंधित विषयों पर खोज का उत्साह आगामी कई वर्षों तक वैज्ञानिकों को प्रेरित करता रहेगा। कार्बनिक एवं कार्बधात्विक रसायन पर अभी और भी कार्य किया जाना है क्योंकि इनकी औद्योगिक उपयोगिता वैज्ञानिकों को इस विषय पर कार्य करने के लिए सम्मोहित करती रहेगी। इसके अतिरिक्त एक या कई विजातीय परमाणु (हेट्रोएटम्स) के साथ फूलरिनों के संश्लेषण की परिकल्पना की जा रही है जैसे बैंजीन, नाइट्रोजन, फॉस्फोरस, सिलिकॉन को कार्बन के पिंजड़े में अंतर्निविष्ट करना। C_{60} की खोज वास्तव में कार्बनिक रसायन के क्षेत्र में एक नये युग की शुरुआत है। निश्चित रूप से इसने, कार्बनिक व अकार्बनिक रसायन वैज्ञानिकों, पदार्थ वैज्ञानिकों एवं भौतिक वैज्ञानिकों की सृजनात्मकता को एक नयी दिशा व नया आयाम दिया है।

❑❑❑

संचार / प्रसार माध्यमों के बढ़ते कदम

डॉ. गोविंद प्रसाद कोठियाल,

तकनीकी भौतिकी एवं प्रारूप प्रौद्योगिकी प्रभाग,
भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र, मुंबई 400 085

सूचना प्रौद्योगिकी आज सबसे चर्चित विषय बन गया है। इसने न केवल विश्व बल्कि अंतरिक्ष में भी ग्रहों / उपग्रहों से दूरियों को एकदम कम कर दिया है। आधुनिक संचार में उपग्रह, कंप्यूटर एवं प्रकाशिकी युक्तियां महत्वपूर्ण भूमिकाएं अदा कर रही हैं। इसमें कोई दो राय नहीं है कि संचार प्राणी जगत की एक मौलिक आवश्यकता है। इस आवश्यकता को समय-समय पर किस प्रकार पूरा किया गया तथा जीवन के उद्भव के समय से आधुनिक युग तक इस क्षेत्र में किस प्रकार के परिवर्तन, अनुसंधान एवं विकास हुए हैं उन पर एक विहंगम दृष्टि इस लेख के माध्यम से प्रस्तुत है। मानवता की भलाई के लिए सूचनाओं एवं जानकारियों का संचार तथा प्रसारण सही तौर पर विवेकपूर्ण दृष्टिकोण के साथ किया जाना अत्यंत आवश्यक है।

क्या आपको यह आश्चर्य नहीं लगता कि अभी 15-20 साल पहले तक हमारे देश की स्थिति यह थी कि हम टेलीफोन पर ठीक से बात चीत भी नहीं कर पाते थे क्योंकि वे या तो खराब पड़े रहते थे या उनमें इतनी अधिक नॉयज रहती थी कि कुछ भी साफ नहीं सुनाई पड़ता था। टेलीविजन पर कुछ घिसे पिटे कार्यक्रम चलते थे, वह भी थोड़े समय के लिए। पत्र-व्यवहार में दिनों लग जाते थे आर टेलीग्राम द्वारा भेजा जाने वाला आपात्कालीन संदेश या तो गलतियों से भरा होता था अथवा घटना हो चुकने के बाद मिलता था। आवागमन में रेलवे बुकिंग का तो राम ही मालिक होता था। इसका तो अंतिम समय तक पता नहीं चल पाता था कि वापसी या आगे का आरक्षण हुआ कि नहीं। परंतु आज स्थिति में बहुत कुछ बदलाव नजर आता है, कुछ बातें जो काल्पनिक लगती थीं, वास्तविकता का रूप धारण कर चुकी हैं। यह संभव हुआ संचार माध्यमों में आयी क्रांति से और अपने देश की संचार नीति में सकारात्मक दृष्टिकोण अपनाने से। आधुनिक संचार व्यवस्था प्रकाशिकी फाइबर संचार, उपग्रह संचार तथा कंप्यूटर संचार तकनीकों के एक सुनियोजित सम्मिलन का परिणाम है। फलस्वरूप आज टेलेक्स, फैक्स, इलेट्रॉनिकी मेल, टेलेनेट, इंटरनेट फोन, पेजर सुविधा, सेल्युलर फोन, अंतरांष्ट्रीय टेलीविजन, अंतर्राष्ट्रीय कंप्यूटर इत्यादि सुविधाएं उपलब्ध हो गयी हैं जिससे हमारे आर्थिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक दृष्टिकोण में प्रभावी तौर पर परिवर्तन आया है।

यदि हम यह कहें कि हर प्राणी के लिए संचार उतना ही आवश्यक है जितना उसे जीवित रहने के लिए हवा, पानी, भोजन इत्यादि, तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी। जन्म लेते ही बच्चे का रोना ? माता से संचार का, प्रकृति द्वारा दिया गया एक सहज तरीका है। मानव सभ्यता के साथ-साथ समय, परिस्थिति एवं आवश्यकताओं के अनुरूप संचार पद्धतियां बदलती गयीं। ऐसा माना जाता है कि ईसा से लगभग 3000 वर्ष पूर्व सुमेरियन सभ्यता के दौरान संचार के लिए लिखने की शुरुआत चित्रों जैसे संकेतों के प्रयोग के साथ हुई। ये चित्र पहले वस्तुओं को इंगित करते थे तथा बाद में इन्होंने आवाज का स्थान

ले लिया । देखा जाय तो संचार के लिए भाषा कि आवश्यकता अहम् है । फिर चाहे वह आंखों की हो, संकेतों की, मशीन की अथवा शब्दों की । चित्रकारी एवं संगीत भी संचार के ही घटक हैं ।

यदि मानव सभ्यता के इतिहास को देखें तो पायेंगे कि संदेश पहुंचाने या संचार के लिए मौलिक तौर पर दो पद्धतियां उभर कर सामने आयी हैं । एक तो वह जिसमें सुनने, बोलने, देखने की क्षमताओं का सीधा उपयोग हुआ और दूसरा वह जिसमें लिखने-पढ़ने, चित्रकारी आदि कलाओं को अपनाया गया । संचार के लिए दो तरह की आवश्यकताएं सदैव से रहीं । पहली निकट संचार की तथा दूसरी दूर संचार से संबंधित। आरंभ से मानव ने निकट संचार के लिए शब्दों, हावभाव से एक दूसरे को अपनी बात कहने का सहारा लिया तथा एक इलाके से दूसरे इलाके तक, एक पहाड़ी से दूसरी पहाड़ी तक संदेश पहुंचाने के लिए धुआं, आग की ज्वाला, ढोल-ड्रम के ध्वनि संकेत आदि का प्रयोग किया । यही नहीं हमारी पौराणिक कथाओं में संदेश वाहक के रूप में कबूतरों, घोड़ों, मानवों आदि की चर्चा मिलती है । आकाशवाणी द्वारा चेतावनी की घोषणा, टेलीपैथी द्वारा घटनाओं का आभास होना भी कम रोचक उदाहरण नहीं हैं । यहीं पर अफ्रीका में बातचीत करने वाले विशेष ड्रम का जिक्र असंगत न होगा । एच. एम. स्टेनल ने 1875-77 में बताया कि ये ड्रम लगभग 12 मीटर लंबे हुआ करते थे और इनसे विभिन्न तीव्रता के आघातों एवं स्वरों को उत्पन्न कर वार्तालाप किया जाता था ।

यदि देखा जाय तो संदेश पहुंचाने तथा एक दूसरे से अपनी बात कहने के कार्य की मौलिक आवश्यकता तो सदैव से चली आ रही है तो फिर तब और अब में फर्क क्या है ? पहले दूर संचार का दायरा वहीं तक होता था जहां तक आवाज पहुंच पाती थी या धुएं या आग की लपटों को आंखें देख पाती थीं अथवा झंडियों द्वारा संकेतों को समझा जा सकता था । परंतु अठारहवीं-उन्नीसवीं शताब्दी में प्रौद्योगिकी तथा विज्ञान के क्षेत्र में जो प्रगति का सिलसिला शुरु हुआ तो संदेश पहुंचाने की दूरियां क्रमशः (उत्तरोत्तर) बढ़ती गयीं । एक ओर देखने, सुनने, बोलने की क्षमताओं में माइक्रोफोन, लाउडस्पीकर सूक्ष्मदर्शी, दूरदर्शी (दूरबीन) इत्यादि उपकरणों द्वारा बढ़ोत्तरी तथा दूसरी ओर लिखने-पढ़ने से संबंधित कलाओं के लिए टाइपराइटर, प्रिंटिंग मशीन, टेलीप्रिंटर, इलेक्ट्रॉनिक टाइपराइटर, कंप्यूटर इत्यादि यंत्रों का आविष्कार हुआ । फलस्वरूप आज हम न केवल एक प्रदेश से दूसरे प्रदेश तक, एक राष्ट्र से दूसरे राष्ट्र तक बल्कि अंतरिक्ष तक, संदेशों को कुछ क्षणों में पहुंचाने में समर्थ हो गये हैं । संचार व्यवस्था के अंतर्गत परिवहन संबंधित साधनों जैसे बस, मोटर गाड़ी, सुपर फास्ट ट्रेन, समुद्रीय जहाज, वायुयान आदि के विकास ने महत्वपूर्ण भूमिका निभायी है और भारत जैसे विकासशील देशों में अभी भी निभा रहे हैं । आधुनिक दूर संचार की दिशा में दो पद्धतियों के विकास का विशेष महत्व माना जाता है । इनमें से एक है मार्गदर्शित पद्धति जिसमें सिगनल-संकेतों को धातु के तार या कांच के तंतुओं में प्रवाहित कर गंतव्य स्थान पर पहुंचाने का कार्य किया जाता है तथा दूसरी अमार्गदर्शित पद्धति जिसमें संकेतों को वायुमंडल में विद्युत चुंबकीय तरंगों के माध्यम से एक स्थान से दूसरे स्थान पर भेजा जाता है । ऐतिहासिक दृष्टि से टेलीग्राफ यानी तार द्वारा संदेश भेजने का काम पहले हुआ । बताया जाता है कि इसका आविष्कार 1787 में फ्रांस के एम लेम्मोड ने किया । इसमें लिखित संदेश को कुछ कोडेड संकेतों के आधार पर प्रेषित किया जाता था । इसी कार्य के लिए एक क्रमबद्ध मोर्स कोड 1837 में, अमेरिका के सेम्युल मोर्स ने तैयार किया था । पहली टेलीग्राफ लाइन 1846 में आस्ट्रिया - बेल्जियम हंगेरी में लगायी गयी और 1849-50 के दौरान दुनिया का पहला केंद्रीय टेलीग्राफ स्टेशन लंदन में फाउन्डर्स कोर्ट में शुरु हुआ । भारत में 1854 में कलकत्ता और आगरा के बीच 1300 किमी और 1855 तक अन्य शहरों को जोड़ती हुई 7000 किमी लंबी लाइन बना दी गयी थी ।

टेलीग्राफ पद्धति में संशोधन होते रहे । इसी दौरान अलेक्जेंडर ग्राह्म बेल ने अपने साथी थॉमस वाटसन के साथ कार्य करते हुए 2 जून 1875 को यह देखा कि यदि एक लोहे की पत्ती जब एक चुंबक के बीच में कंपन कर

रही हो तो इससे जुड़े तार में धारा प्रवाहित होने लगती है। यही वह ऐतिहासिक प्रेक्षण है जिसके आधार पर ग्राह्म बेल ने 10 मार्च 1879 को टेलीफोन द्वारा बातचीत का पहला प्रदर्शन किया। इस प्रकार हजारों मील दूर बैठे अपने दोस्त-संबंधी से सीधे बात-चीत करने की पद्धति तैयार हुई।

संचार के क्षेत्र में बेतार तकनीक का महत्व किसी से छुपा नहीं है। 19वीं शताब्दी के आरंभ में इंग्लैंड के माइकल फैराडे ने यह प्रदर्शित किया कि जब विद्युत धारा एक तार में से गुजरती है तो यह अपने चारों ओर एक चुंबकीय क्षेत्र उत्पन्न करती है और विद्युत-चुंबकीय तंरग बनती है जिसे वायुमंडल एवं अंतरिक्ष में बिना तार के उपयोग किये बहुत अधिक दूरी तक भेजा जा सकता है। जर्मनी के हेनरिच हर्ट्ज ने इन तरंगों का अध्ययन किया तथा अधिक तरंगदैर्घ्य वाली रेडियो तरंगों की पहचान की। तभी 1887 में संसार का पहला एन्टीना बनाया गया। इसी समय इटली के गुग्लीलमों मारकोनी को जब इसका पता चला तो उन्होंने इन तरंगों की सहायता से संदेश भेजने का विचार किया। अपने अथक प्रयासों के उपरांत 1895 तक मारकोनी ने एक ऐसा यंत्र बना लिया था जिसके द्वारा लगभग एक मील तक विद्युत स्पंद को भेजा जा सका। इटली में मारकोनी को इस कार्य के लिए अधिक प्रोत्साहन नहीं मिला इसलिए वे इंग्लैंड चले आये। जहां 1896-97 में उन्होंने बेतार यानी वायरलेस टेलीग्राफी का सफल प्रदर्शन किया। 1897 में लगभग 12 मील और 1899 तक इंगलिश चैनल, जो लगभग 31 मील की है, के पार रेडियो संचरण में सफलता हासिल कर दिखाई। 1909 में इन कार्यों के लिए मारकोनी को नोबेल पुरस्कार से सम्मानित किया गया।

1904 में सर जॉन एम्ब्रोस ने तापायनिक डायोड और 1906 में ली. डी. फॉरेस्ट ने ट्रायोड बनाये जो निर्वात वाल्व कहलाते हैं। इनका उपयोग करके 1906 में पहला रेडियो तैयार किया गया। इसके उपरांत 1910 तक रेडियो प्रणाली का जिसमें एक ट्रांसमीटर और एक रिसीवर होते हैं, का पूरा विकास हो चुका था। उस समय इस प्रणाली में निर्वात वाल्वों का प्रयोग हुआ जिनकी अपनी दिक्कतें थीं। कालांतर में, 1948 में सॉलिड स्टेट ट्रांजिस्टर बने जिस कार्य के लिए बेल टेलीफोन प्रयोगशाला के तीन अमेरीकी वैज्ञानिक शॉक्ले, बार्डीन तथा ब्रेट्टेन के हम आभारी हैं। इसके बाद से आधुनिक रेडियो संचार प्रणाली में इन पर आधारित माइक्रोचिप प्रयुक्त किये जाने लगे।

आप यह अवश्य जानना चाहेंगे कि जो प्रसारण आप आकाशवाणी के माध्यम से सुनते हैं वह कैसे काम करता है ? जब आकाशवाणी के स्टूडियो में हम बात कर रहे होते हैं तो हमारे मुंह से निकलने वाली आवाज यानी ध्वनि तरंगों को एक माइक्रोफोन द्वारा विद्युत धारा और फिर विद्युत चुंबकीय तरंगों में बदल दिया जाता है। फिर इन तरंगों को उच्च आवृति की विद्युत चुंबकीय तरंगों, जिन्हें वाहक तरंग के नाम से जाना जाता है के साथ मिला दिया जाता है। ये अब अधिमिश्रित यानी माड्यूलेटेड तरंगें होती हैं। इन तरंगों को एन्टीना के द्वारा वायुमंडल में चारों ओर प्रसारित कर दिया जाता है। जब ये रिसीवर सेट के एन्टीना पर पहुंचती हैं तो उसमें मिश्रित विद्युत धारा उत्पन्न करती हैं जिसमें से मुख्य सिगनल को इलेक्ट्रॉनिकी संसाधन द्वारा पृथक कर उसी प्रकार की ध्वनि में बदल दिया जाता है जैसी ध्वनि प्रसारण से पूर्व थी। भारत में रेडियो प्रसारण की शुरुआत 1936 में हुई।

सूचना प्रसारण के क्षेत्र में एक नया कीर्तिमान तब स्थापित हुआ जब वैज्ञानिकों ने ध्वनि एवं चित्रों को साथ-साथ प्रेषित करने की बात सोची। इस दिशा में अमेरिका के जॉर्ज केरी, फ्रांस के मॉरिस लेव लेन तथा बोरिस रोजिंग ने अपने-अपने दृष्टिकोण से विकास के प्रयत्न किये। फलस्वरुप 26 जनवरी 1926 को बैयर्ड ने टेलीविजन का सफल प्रदर्शन किया लेकिन प्रसारण के लिए अनुकूल होने के लिए संशोधनों का सिलसिला जारी रहा तथा सही मायने में 1936 में लंडन के एलेक्जेंडरा प्लेस से टेलीविजन प्रसारण कार्य शुरु हुआ। भारत में टेलीविजन प्रसारण की शुरुआत दिल्ली वासियों के लिए 15 सितंबर 1959 में हुई। उसके बाद धीरे धीरे यह अन्य बड़े शहरों में पहुंचा। आज जब इस प्रसारण के लिए उपग्रह का उपयोग संभव हो गया है तो यह टेलीविजन भारत के गांव-

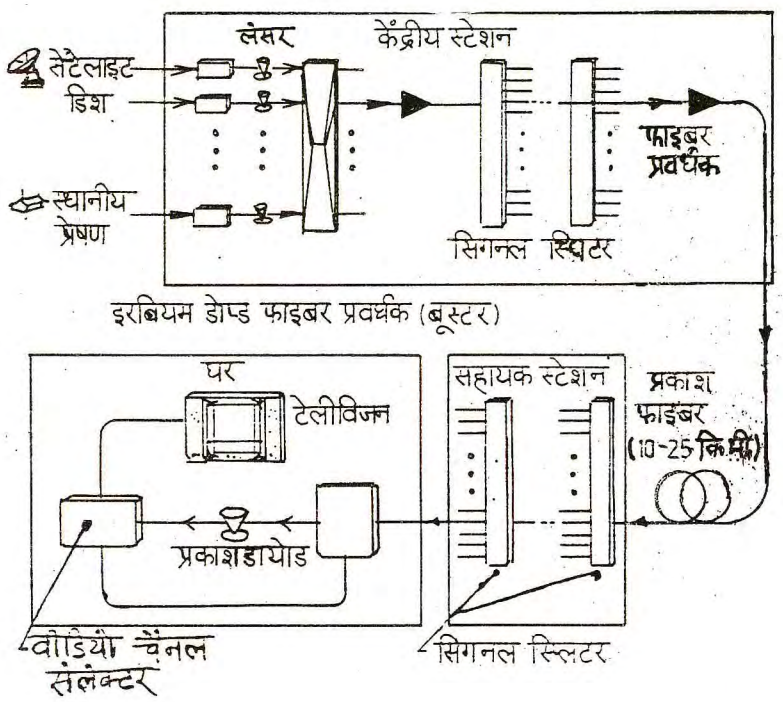

चित्र-1 : उच्च विभेदन क्षमता वाली टेलीविजन प्रसारण नेटवर्क प्रणाली

गांव तक पहुंच गया है।

टेलीविजन प्रसारण के लिए दूरदर्शन केंद्र में एक वीडियो कैमरा होता है जो एक इलेक्ट्रॉन ट्यूब जिसे आर्थिकन कहते हैं से जुड़ा होता है। जिस दृश्य को प्रसारित करना होता है उस पर कैमरे को केंद्रित किया जाता है ताकि उसका प्रतिबिंब आर्थिकन ट्यूब की प्रकाश सुग्राही प्लेट पर बन जाता है। इस प्लेट से प्रकाश की तीव्रता के अनुसार इलेक्ट्रॉन निकलते हैं। प्रतिबिंब को कैथोड रे ट्यूब द्वारा स्कैन कराते हैं ताकि प्रतिबिंब विद्युत धारा में परिवर्तित हो जाय। यह धारा वीडियो सिगनल कहलाती है। इसको एम्पलीट्यूड माड्यूलेशन करके तरंगों के रूप में ट्रांसमिट किया जाता है। इसके साथ-साथ ऑडियो सिगनल को, जो माइक्रोफोन द्वारा मिलता है आवृति माड्यूलेशन करके प्रसारित कर दिया जाता है। ये दोनों सिगनल जब रिसीवर एन्टीना पर पहुंचते हैं तो वहां से विद्युत धारा में बदल कर टेलीविजन सेट पर पहुंचते हैं। अब इलेक्ट्रॉनिक संसाधन से ये दोनों सिगनल अपने मूल रूप में, यानी चित्र जो पर्दे पर दिखता है तथा आवाज जो स्पीकर से सुनाई पड़ती है, बदल जाते हैं। रंगीन टेलीविजन (जिसमें तीन मौलिक रंगों के मिश्रण से प्रतिबिंब रंगीन बनता है) के आगमन से यह माध्यम आज अत्यंत लोकप्रिय बन गया है। सीधे प्रसारण के अतिरिक्त घटनाओं को वीडियो टेप करके कैसेट में भी भर सकते हैं तथा फिर उनका यथावश्यक तौर पर प्रसारण भी किया जा सकता है।

बैयर्ड द्वारा 1926 में टेलीविजन के सफल प्रदर्शन के बाद एच. ई. आइवेस ने 1927 में वाशिंगटन डी. सी. से न्यूयॉर्क तक तार के माध्यम से दोनों चित्र तथा आवाज का एक तरफा प्रसारण करके दिखाया। इसके बाद कई संशोधन हुए। 1970 में बेल टेलीफोन कंपनी ने पहली

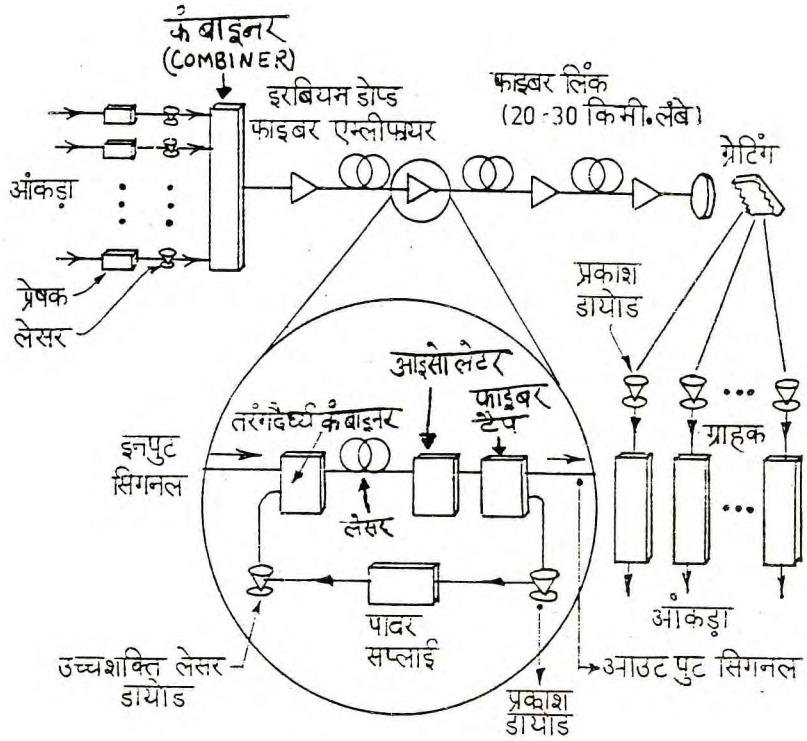

चित्र-2 : इरबियम डोप्ड फाइबर युक्त दूर संचार प्रणाली

कमर्शियल वीडियो टेलीफोन सर्विस का एलान किया।

अब हम उस संचार व्यवस्था की ओर चलते हैं जिससे सारे विश्व को एक साथ जोड़ने की दिशा में क्रांति आयी। यह है उपग्रह संचार प्रणाली जिसकी परिकल्पना आर्थर क्लार्क ने सर्वप्रथम 25 मई 1945 में की थी। कृत्रिम उपग्रह संचार प्रणाली के पूर्ण विकास से पहले अमरीकी नौसेना ने पृथ्वी के प्राकृतिक उपग्रह चंद्रमा को जुलाई 1954 में संचार के लिए प्रयुक्त किया।

उपग्रह संचार प्रणाली के तीन मुख्य घटक होते हैं: पहला सूचना प्रेषण एवं अभिग्राही केंद्र, दूसरा संचार माध्यम यानी वायुमंडल तथा तीसरा उपग्रह। उपग्रह अंतरिक्ष में एक दिव्य चक्षु के समान होता है जो पृथ्वी के एक तिहाई भाग को देख सकता है और उससे संपर्क बना सकता है। यदि तीन उपग्रहों को उचित स्थानों पर स्थापित कर दें तो सारे विश्व से एक साथ संपर्क संभव हो जाता है।

अब प्रश्न उठता है कि सूचना कैसे भेजी तथा प्राप्त की जाती है। सूचनाओं को तरंगों के रूप में उपग्रह तक पहुंचाया जाता है जहां से वे फिर तरंगों के रूप में अभिग्राही केंद्र पर पहुंचती हैं। सामान्यत: इस कार्य के लिए माइक्रोवेव का प्रयोग होता है जिसका आवृति प्रसार लगभग सौ से एक हजार करोड़ हट्र्ज यानी प्रति सेकंड होता है। उपग्रह में सूचनाओं के ग्रहण तथा प्रेषण में कई माइक्रोवेव इलेक्ट्रॉनिकी संयंत्रों का प्रयोग होता है जिनका भार तथा ऊर्जा खपत काफी होती है। इसलिए इनके स्थान पर लेसर के उपयोग पर बल दिया जा रहा है। लेसर संचार में प्रयुक्त तरंग आवृत्ति प्रसार माइक्रोवेव के मुकाबले एक लाख गुणा अधिक है अत: इसमें हजारों गुणा अधिक सूचना प्रचालन की क्षमता होती है। इसके लिए प्रयुक्त उपकरण काफी छोटे, तथा कम ऊर्जा खपत वाले होते हैं। इसलिए उपग्रह के भार में उल्लेखनीय कमी लायी जा सकती है जो आर्थिक दृष्टि से अत्यंत लाभकारी

होता है । लेसर प्रणाली द्वारा लगभग एक से सोलह गीगाबिट प्रति सेकंड की दर से सूचना भेजी जा सकती है जो किसी भी मापदंड से अत्यंत अधिक मानी जा सकती है । एक अनुमान के लिए यह समझ लीजिए कि एक गीगाबिट प्रति सेकंड की दर से आंकड़ा भेजने का मतलब है पूरी एन्साइक्लोपीडिया ब्रिटानिका का एक सेकंड में प्रेषण । उपग्रह संचार में लेसर के प्रयोग से लाखों टेलीफोन तथा कई टेलीविजन प्रणालियां एक साथ प्रचालित होती हैं । आज जो हमें इतने अधिक टी. वी. चैनल उपलब्ध हो गये हैं वह उपग्रह संचार की ही देन है ।

इससे पहले कि कंप्यूटर पर आधारित प्रसार प्रणाली की चर्चा करें, प्रकाश संचरण के बारे में कुछ जानकारी हासिल कर लें क्योंकि प्रकाशकीय फाइबर संचार का कंप्यूटर संचार से गहरा संबंध है । जैसा कि हम जान चुके हैं कि दूर संचार के आरंभिक दौर में सूचनाओं को विद्युत संकेतों के रूप में तांबे के तारों में से भेजा जाता था । तारों की लंबाई अधिक होने से इसमें संकेत का ह्रास काफी होता था । अतः उसे प्रवर्धित करने के लिए जगह-जगह रिपीटर लगाने पड़ते थे जो महंगे पड़ते थे एवं संकेत की गुणता भी खराब होती जाती थी । परंतु जब 1975 में डॉ. सी. ए. काओ और डॉ. जी. ए. हाक्हेम ने फाइबर ग्लास यानी कांच के तारों में से प्रकाश संचरण की बात कही तो संचार के लिए सूचनाओं को विद्युत संकेतों के स्थान पर प्रकाश संकेतों के रूप में भेजने की प्रणाली विकसित हुई । इसमें उच्च दर पर सूचनाएं भेजी जा सकती हैं जो कंप्यूटर की उच्च सूचना संसाधन क्षमता से मेल खाती है । इस प्रणाली का लाभ यह भी है कि इसमें सूचनाओं का ह्रास बहुत कम होता है, साथ ही कुचालक होने के कारण संकेत के साथ कोई विद्युत-चुंबकीय व्यतिकरण यानी इन्टरफेयरेंस भी नहीं होता । सूचनाएं आसानी से टैप नहीं की जा सकतीं । इसमें रिपीटर काफी दूरी पर लगाने पड़ते हैं । आरंभ में सिलिका फाइबर प्रयुक्त किये गये परंतु अब पांचवी पीढ़ी के संचार के लिए इर्बियम डोप्ड फाइबर प्रयुक्त किये जा रहे हैं जिनमें संकेत बिना रिपीटर के प्रवर्धित होते जाते हैं और इससे उनकी गुणता ज्यों की त्यों बनी रहती है । प्रकाश संचरण के लिए 1.33 तथा 1.55 माइक्रोन तरंगदैर्ध्य वाले लेसर को उत्तम समझा जा रहा है क्योंकि ग्लास फाइबर तथा वायुमंडल में इनका अवशोषण नहीं होता है ।

संचार के क्षेत्र में कंप्यूटर की उपयोगिता ने इस क्षेत्र को एक नया आयाम दिया । इसका मुख्य कारण था कंप्यूटर की उच्च गति, परिशुद्धता तथा सूचना भंडारण यानी स्मृति क्षमता । आज के सुपर कंप्यूटर करोड़ों सूचना निर्देशों को प्रति सेकंड की दर से प्रचालित एवं संसाधित करने में सक्षम हैं । हालांकि कंप्यूटर का विकास गणितीय परिगणनाओं के ध्येय से 1944 में अमेरिका के हार्वर्ड विश्वविद्यालय में प्रो. होवार्ड ऐकेन एवं उनके साथियों द्वारा किया गया, परंतु उच्चगति कंप्यूटरों के बन जाने के बाद से संचार प्रौद्योगिकी में इसके प्रयुक्त किये जाने की अनेक संभावनाएं सामने आयीं । रेलवे तथा हवाई यात्राओं के आरक्षण में कंप्यूटर आ जाने से जो सरलता एवं सुविधा आज हमें मिल रही है उससे तो आप सभी परिचित हैं ।

कंप्यूटर संचरण में स्थानीय क्षेत्र जालक्रम यानी लोकल एरिया नेटवर्क की अहम् भूमिका है । यह नेटवर्क क्या है इसे यों समझ सकते हैं :-

जब तक कंप्यूटर अलग-अलग रहते हैं तो उनका महत्व प्रसार माध्यम के रूप में प्रभावी नहीं होता क्योंकि यह ठीक उसी प्रकार की स्थिति होती है जैसे कि 10-15 लोगों के पास सूचनाएं हैं परंतु उनका एक दूसरे से कोई संपर्क नहीं है । इन सब लोगों के पास जब एक-एक टेलीफोन दे दिया जाय तो वे अपने-अपने स्थानों से एक दूसरे को सूचनाएं भेज सकते हैं । इसी प्रकार अलग-अलग व्यक्तियों के कंप्यूटरों को जब आपस में केबलों की सहायता से जोड़ दिया जाता है और उनमें यथावश्यक इन्टरफेसिंग भी कर दी जाय ताकि एक व्यक्ति उचित सॉफ्टवेयर की मदद से अन्य सभी कंप्यूटरों से संपर्क या लिंक कर सके तो संचार प्रक्रिया स्वतः शुरू हो जायेगी । अब हम आते हैं स्थानीय जालक्रम पर । यह एक भवन के विभिन्न मंजिलों या आस-पास के कई भवनों में स्थित कंप्यूटरों को आपस में लिंक या जोड़ने से बनता है । अलग-अलग इलाकों में इसी प्रकार के

स्थानीय नेटवर्क बनाये जा सकते हैं। इन अलग-अलग इलाकों के नेटवर्क को एक विशेष गेटवे (GATEWAY) कंप्यूटर से जोड़ देते हैं जिससे सभी स्थानीय क्षेत्र के नेटवर्क आपस में जुड़ जाते हैं और एक बड़ा नेटवर्क बन जाता है। इस प्रकार संचार कार्य केवल एक भवन में सीमित न रह कर एक इलाके से दूसरे इलाके, एक शहर से दूसरे शहर, एक राष्ट्र से दूसरे राष्ट्र तक एक कंप्यूटर टर्मिनल पर बैठ कर संभव हो जाता है। आज का बहुचर्चित इन्टरनेट यानी अंतर्राष्ट्रीय जालक्रम में संसार के तमाम कंप्यूटरों को आपस में जोड़ा गया है जिससे बंबई में बैठा वैज्ञानिक या व्यापारी अपने कंप्यूटर के माध्यम से न्यूयॉर्क या टोक्यो के वैज्ञानिक या व्यापारी के कंप्यूटर तक अपनी पहुंच बना पाता है। इस प्रकार के अंतर्राष्ट्रीय नेटवर्क में उपग्रह एवं प्रकाशीय फाइबर संचार पद्धतियों के अलावा पॉकेट स्विच्ड टेलीफोन नेटवर्क प्रौद्योगिकी विशेष योगदान देती है। इन टेलीफोन लाइनों का उपयोग मोडेम यानी मॉड्यूलेटर-डिमाड्यूलेटर इलेक्ट्रॉनिकी युक्ति की सहायता से होता है।

हमारे देश का सबसे बड़ा जालक्रम का नाम है निकनेट यानी राष्ट्रीय सूचना केंद्र जालक्रम जो दिल्ली में लगाये गये विशाल कंप्यूटर से नियंत्रित होता है। विभिन्न राज्यों एवं जिलों से संपर्क करने के लिए पहले विदेशी उपग्रह इंटलसेट को काम मे लाते थे परंतु अब यह कार्य स्वदेशी उपग्रह इनसैट-1 डी (प्रक्षेपण वर्ष जून 1990) द्वारा संपन्न होता है। इसके बाद दूसरी पीढ़ी के उपग्रह इन्सैट 2A (जुलाई 1992), इन्सैट 2B (जुलाई 1993), इन्सैट-3सी (दिसंबर 1995) तथा इन्सैट 2डी (जून 1997) अंतरिक्ष में प्रक्षेपित किये गये।

रेडियो तथा टेलीविजन संचार के दो ऐसे माध्यम बन गये हैं जिनका राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर महत्व किसी से छुपा नहीं है। घर में बैठे-बैठे संसार के किसी भी कोने में होने वाली घटना को इन दोनों माध्यमों के द्वारा सुन तथा देख सकते हैं। इन माध्यमों को प्रभावी बनाने में इंटरनेट की एक अहम् भूमिका है। राष्ट्रीय प्रसारण केंद्रों में इसी नेटवर्क से सूचनाएं मिलती हैं जिन्हें तत्काल राष्ट्रीय प्रसारण केंद्र हम तक पहुंचा देते हैं। हमारे देश में दो अन्य नेटवर्क - इरनेट तथा सिरनेट कार्य कर रहे हैं जिनकी सहायता से देश के विभिन्न शैक्षणिक तथा अनुसंधान संस्थान एवं व्यावसायिक प्रतिष्ठानों के बीच एक अतितीव्र गति वाले संचार संपर्क की पद्धति कार्य करने लगी है। इंटरनेट ने कई आधुनिक संचार सुविधाएं मुहैया करा दी हैं, जैसे इलेक्ट्रॉनिक पत्र व्यवहार अर्थात ई-मेल, इंटरनेट फोन, समाचार, वर्ड वाइड वेब, टेलेनेट इत्यादि।

ई-मेल पद्धति आज के प्रचलित संचार के अन्य साधन जैसे कोरियर, फैक्स, टेलेक्स की अपेक्षा काफी सस्ती और सुविधाजनक है बशर्ते की आपके पास यह सुविधा उपलब्ध हो। जहां टेलिफोन पर बात करते समय दूसरा व्यक्ति भी मौजूद होना चाहिए वहां ई-मेल में आज जब चाहे जितना चाहें लिखित संदेश भेज सकते हैं। उत्तर भी आपको कंप्यूटर पर आ जायेगा। अर्थात दूसरी तरफ अमुक व्यक्ति का उस समय वहां होना आवश्यक नहीं है। इंटरनेट फोन में ऐसी सुविधा है कि आप कंप्यूटर के द्वारा एक माइक्रोफोन से घंटों विदेश में बात कर सकते हैं और वह भी बहुत कम खर्चे में। इंटरनेट में अभी 4000 से अधिक समाचार समूह हैं। आप जिस भी विषय पर जानकारी चाहते हैं उनकी मेलिंग लिस्ट में अपने कंप्यूटर को लिंक करा दें तो सूचनाएं निरंतर मिलती रहेंगी। वर्ड वाइड वेब ऐसा विश्वव्यापी जाल है जिसकी सहायता से हम Text यानी पाठ को न केवल पढ़ सकते हैं, सुन तथा देख भी सकते हैं। संसार के विभिन्न कंप्यूटरों में जो भी आंकड़ा संचय (data base) होता है उन सबका उपयोग वेब द्वारा एक साथ किया जा सकता है। टेलेनेट सुविधा द्वारा आप दूसरे के कंप्यूटर पर भी काम कर सकते हैं तथा उसमें उपलब्ध सभी सुविधाओं का उपयोग भी।

आज इंटरनेट से 180 देशों के पचास हजार से अधिक नेटवर्क जुड़े हुए हैं। लगभग 90 लाख लोग वेब का उपयोग करते हैं। अनुमान है कि यह संख्या 1997 में 2.5 करोड़ तथा 1999 तक 20 करोड़ हो जायेगी।

बहु माध्यम टेलीविजन प्रसारण (यानी एक से अधिक संचार माध्यमों जैसे ध्वनि, संगीत, छवियां, पाठ

के सम्मिलन से तैयार) से एक स्टूडियो में बैठकर संसार में किसी भी व्यक्ति से साक्षात्कार करना, तत्काल उसे प्रसारित कर देना कितनी आम बात हो गयी है। एक ही पर्दे पर साक्षात्कार करने वाला और जिससे बातचीत की जा रही है एक साथ देखे जा सकते हैं। यह संभव हुआ है कंप्यूटर हार्ड एवं सॉफ्टवेयर के नवीनतम विकास के फलस्वरूप। बहुमाध्यम प्रौद्योगिकी में एक कांपैक्ट डिस्क में ध्वनि, छवि, आलेख, तथा अन्य जानकारियों को अंकीय रूप में मिश्रित कर दिया जाता है। यह प्रणाली दो प्रकार की होती है; (i) प्रतिक्रियात्मक एवं (ii) अप्रतिक्रियात्मक। पहली प्रणाली में देखने एवं सुनने के साथ साथ अपना संदेश भी पहुंचाया जा सकता है जबकि दूसरे में नहीं। पिछले आम चुनावों तथा क्रिकेट खेलों के दौरान भी इस पद्धति का व्यापक उपयोग हुआ। स्थानीय नेटवर्क के उपयोग से टेलीकांफ्रेंसिंग उच्चस्तर पर काफी प्रचलित होती जा रही है। एक और सुविधा जो व्यापारिक क्षेत्र के लोगों तथा उच्च सरकारी एक्जिक्यूटिवों एवं प्रशासकों के लिए काफी सुलभ यानी हेन्डी बन गयी है वह है सैल्यूलर फोन। यह भी विभिन्न स्थानीय नेटवर्कों को जोड़ने से तैयार हुई है। मुंबई में यह नेटवर्क दो कंपनियों के पास ही है। ये कंपनियों के नाम हैं बी.पी.एल. मोबाइल तथा हचिंशन मैक्स। इन टेलीफोनों की सहायता से आप अपनी वातानुकूलित कार में से, जो महानगरों के ट्रैफिक जैम में फंस गयी हो, अपने ऑफिस अथवा अत्यावश्यक मीटिंग की जगह पर सूचित कर सकते हैं। मीटिंग में न पहुंच पाने की स्थिति में अपनी राय भेज सकते हैं ताकि काम में कोई रुकावट न आने पाये। हालांकि यह संचार बहुत सुविधाजनक हो गया है परंतु कुछ स्वास्थ्य संबंधित कारणों से विवादों के चक्र में फंसा है। चूंकि सेल्यूलर फोन में माइक्रोवेव का प्रयोग होता है इसलिए इससे प्रयुक्ता के दिमाग पर हानिकारक प्रभाव पड़ने की आशंका रहती है। बी.पी.एल. मोबाइल के संयुक्त वाइस प्रेसीडेन्ट श्री अक्षय कुमार इस बात से इन्कार करते हैं कि "सेल्युलर फोन के उपयोग से कैंसर या कोई और हानिकारक प्रभाव हैं।" मोटोरोला के मार्केटिंग प्रबंधक श्री राजीव चंद्र भी यही बात करते हैं।

आधुनिक संचार का एक और रोचक उदाहरण है ऑपरेटर के स्थान पर मशीन को निर्देश देकर संयंत्र को स्टार्ट करना। अमेरिका जैसे विकसित देशों में जहां प्रयोगशालाओं तथा उत्पादन यूनिटों में कंप्यूटरीकरण द्वारा स्वचालन पद्धति प्रचलित है तथा स्थानीय नेटवर्क पूर्ण रूप से दक्ष एवं विश्वसनीय बन गये हैं। एक वैज्ञानिक अथवा प्रबंधक प्रातःकाल उठकर अपने घर से कंप्यूटर की सहायता से मीलों दूर स्थित प्रयोगशाला या फैक्टरी में उपकरण या संयंत्र को स्टार्ट कर देता है ताकि जब 10-11 बजे वह प्रयोगशाला में पहुंचे तो उपकरण कार्य करने की स्थिति में तैयार रहे। निसंदेह आधुनिक संचार प्रणाली ने समय को कितना बहुमूल्य बना दिया है। जब इलेक्ट्रॉनिक मीडिया में सूचनाओं और विचारों के मुक्त प्रवाह की सुविधा उपलब्ध हो गयी है तो राष्ट्रीय सुरक्षा तथा सामाजिक जीवन से संबंधित कुछ प्रश्न भी उठने लगे हैं। इससे व्यक्तिगत तथा निजी जीवन पर भी हस्तक्षेप होने का खतरा लगता है। इसके माध्यम से अश्लील साहित्य संबंधित समाचार समूह काफी लोकप्रिय होता जा रहा है। क्राइम की दुनियां को भी इस माध्यम से लाभ मिल रहा है क्योंकि पुलिस की खुफिया सूचनाओं एवं योजनाओं को वे आसानी से जान जाते हैं। अतः इस ओर विशेष सचेत रहने की आवश्यकता है।

यही नहीं इसकी बहुतायत से एक वैचारिक शून्यता पनप रही है। बहुमाध्यम, बहुराष्ट्रीय टेलीविजन ने तो जनसामान्य का सारा समय ले लिया है। बच्चे तथा भावी प्रतिभाओं में चिंतन की प्रवृति कम होती जा रही है क्योंकि इतनी अधिक पकी पकायी सामग्री टेलीविजन पर मिल जाती है वे उस भ्रष्ट दायरे (यानी vicious circle) से बाहर नहीं निकल पाते। गंभीर लेखन एवं पढ़न-पाठन की आदत एक दम घटती जा रही है जो निसंदेह एक विचारणीय प्रश्न है।

लॉर्ड रीथ ने जो एक बात कही थी कि माध्यम ही संदेश है (Medium is the message), हमें यह याद दिलाता है कि सूचना प्रसार में हमें विशेष सावधानी

(शेष पृष्ठ -30 पर देखें)

जीव विज्ञान द्वारा मुंबई के निकटवर्ती समुद्र तटीय प्रदूषण का अध्ययन*

डॉ. शं. न. गजभिये [1] एवं रमा शर्मा [2]

[1]राष्ट्रीय समुद्र विज्ञान संस्थान, क्षेत्रीय केंद्र,
[2]केंद्रीय मत्स्य शिक्षा संस्थान,
सात बंगला, वरसोवा, मुंबई - 400 061

समुद्र के जलीय परितंत्र में जो बदलाव आ रहा है, उसका सबसे ज्यादा प्रभाव जैविक संसाधन पर पड़ रहा है। इन संसाधनों की श्रृंखला में वनस्पति प्लवक, प्राणी प्लवक, नितलस्थ समुदाय, मछलियों एवं अन्य छोटे-बड़े सभी प्राणियों का समावेश है। प्रदूषण के आकलन में इन सभी प्रजातियों के समुदायों की संरचना एवं जीव-विविधता बहुत ही महत्वपूर्ण है। इन तथ्यों को ध्यान में रखते हुए इन सभी संसाधनों को प्रदूषण अध्ययन का एक अटूट हिस्सा माना गया है। मुंबई के आसपास के तटीय क्षेत्रों में प्रदूषण की तीव्रता का मूल्यांकन करने के लिए पलैजिक और नितलस्थ जीव-समूह को प्रधानता देकर, जलीय परितंत्र में आये हुए बदलाव का अध्ययन किया गया है और उसके लिए मुख्यतः प्रदूषणग्रस्त और अप्रदूषित समुद्री जलक्षेत्र का चुनाव किया गया।

अध्ययन द्वारा उपलब्ध तथ्यों से पता चलता है कि प्रदूषित जलक्षेत्र में वनस्पति प्लवक और प्राणी प्लवक, की मात्रा में काफी उतार-चढ़ाव आया है। वनस्पति प्लवक के पर्णहरित 'ए' की मात्रा 0.5 - 110.0 मिग्रा./मी.^{3} के बीच में पायी गयी है और कुछ गिनी-चुनी प्रजातियां ही इस क्षेत्र में अपना अस्तित्व बनाये रख पायी हैं। प्राणी प्लवक की मात्रा में भी, वनस्पति प्लवक की तरह उतार-चढ़ाव आता है। इस उतार चढ़ाव का स्तर 0.04 - 54.5 मिली./100 मी^{3} के बीच पाया गया, जबकि अप्रदूषित क्षेत्र में यह उतार-चढ़ाव बहुत ही कम (5.1 - 25.4 मिली./100 मी.^{3}) दिखाई देता है। इस क्षेत्र में सायफोनोफोरस (लैमेलीबैकियट्स) और फिश लारवा (मत्स्य डिंबक) का आपतन ज्यादा होता है। प्रदूषित जलक्षेत्र में मेडूसा, कंकतधर (टेनोफोर), माइसिड्स, बहुशूक (पॉलीकीट) की संख्या काफी ज्यादा पायी गयी है जो इस बात का संकेत देती है कि उपरोक्त प्रजातियां इस क्षेत्र की परिस्थितियों को सहन करने की क्षमता रखती हैं। थाना खाड़ी की तुलना में वरसोवा और माहिम खाड़ी में उपलब्ध प्राणी प्लवकों में तांबा और कैडमियम की मात्रा ज्यादा पायी गयी है तथा कोबाल्ट, निकिल जैसी धातुओं की मात्रा थाना में उपलब्ध प्राणी प्लवकों में ज्यादा पायी गयी है। इन परिणामों के आधार पर जैविक गुणधर्मों, की विस्तृत चर्चा इस लेख में प्रस्तुत की गयी है।

प्रस्तावना

भारत के प्रधान औद्योगीकृत शहरों का निकटवर्ती समुद्र तटीय वातावरण बड़ी मात्रा में अपशिष्टों के विसर्जन द्वारा प्रदूषित हो रहा है। इससे आम जनता में भी अपशिष्टों के विसर्जन को नियंत्रित करने के लिए उपयुक्त वातावरणीय प्रबोधक मापों द्वारा प्रभावकारी प्रणाली प्रयोग करने की जागरूकता बढ़ी है। इन सभी

** "आर्थिक विकास में विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी का योगदान" विषय पर हिं. वि. सा. प., राष्ट्रीय समुद्र विज्ञान संस्थान, तथा गोवा विश्वविद्यालय द्वारा संयुक्त रूप से 3-4, सितंबर 1997 को गोवा में आयोजित संगोष्ठी में प्रस्तुत शोधपत्र।*

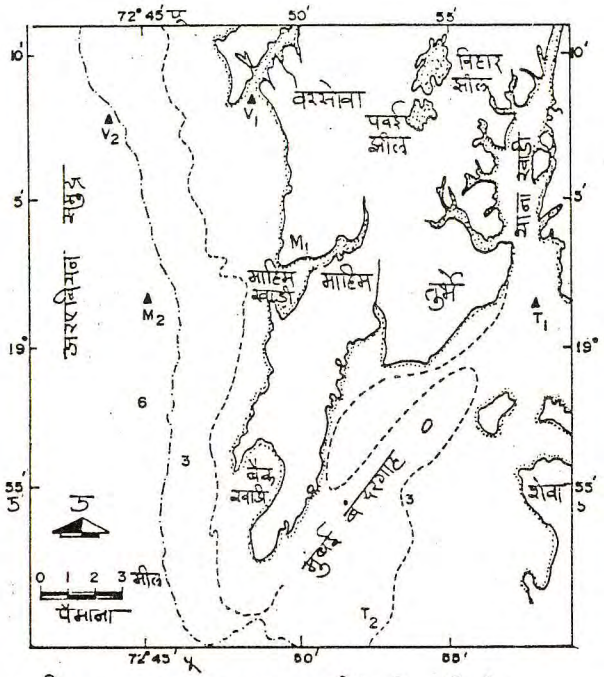

चित्र 1. अध्ययनरत स्थानों की स्थिति

मूल्यांकनों में, जैविक शोध या सुनिश्चित तौर पर समुदाय, संरचना या विविधता जो कि मुख्यतः महत्वपूर्ण है, को ध्यान में रखते हुए जीव वैज्ञानिक एक अभिन्न भूमिका निभाते हैं। अगर इसका योजनाबद्ध तरीके से अध्ययन किया जाये तो इससे लंबी अवधि के लिए प्रचलित वातावरणीय स्थिति की जानकारी मिलती है, जो कि भौतिक- रासायनिक प्राचलों की तुलना में वातावरणीय स्थिति में आये अस्थायी परिवर्तनों के लिए अपेक्षाकृत कम संवेदनशील है। समुद्रीय जीवों की इस विशेषता को ध्यान में रखते हुए मुंबई के निकटवर्ती समुद्र तटीय जल का विस्तृत सर्वेक्षण किया गया और प्राणी प्लवकों से प्राप्त परिणामों को एक अध्ययन के रूप में इस लेख में प्रस्तुत किया गया है।

सामग्री एवं विधियां :

वर्ष 1979-80 व 1983-84 के दौरान किये गये अध्ययन पर आधारित परिणामों को यहां प्रस्तुत किया जा रहा है। वनस्पति प्लवक और प्राणी प्लवक पर प्रदूषण के प्रभाव का मूल्यांकन करने के लिए दो प्रकार के स्थानों का चुनाव किया गया। प्रदूषणग्रस्त क्षेत्रों में थाना खाड़ी (स्थान T_1), माहिम खाड़ी (स्थान M_1) व वरसोवा खाड़ी स्थान (V_1) (चित्र-1) को लिया गया, जिसमें थाना खाड़ी मुख्यतः औद्योगिक स्राव से प्रदूषित है, जबकि अन्य दो खाड़ियों में बड़ी मात्रा में मल-जल आता है। खाड़ी क्षेत्रों के अनुरूप 12-16 मी. की गहराई पर, बंदरगाह क्षेत्र में, ऐसे तीन स्थान – थाना खाड़ी, माहिम खाड़ी व वरसोवा खाड़ी में चुने गये जो अपेक्षाकृत कम प्रदूषित थे।

परिणाम एवं परिचर्चा :

मुंबई (अक्षांश 18^0 55', रेखांश $72^0$49') भारत के पश्चिमी तट पर 10 करोड़ आबादी वाला सबसे बड़ा महानगरीय शहर है। लगभग 20,000 औद्योगिक इकाइयों से मिलकर बना कुल उद्योगों का 30 प्रतिशत, इस शहर व इसके निकटवर्ती क्षेत्रों में ही उपस्थित है। शहर से उत्पन्न मल-जल व औद्योगिक अपशिष्टों की मात्रा लगभग 1500 एम. एलडी. है, जबकि प्रतिपादन संयंत्र द्वारा उपलब्ध वर्तमान उपचार क्षमता केवल 350 एम. एलडी. है।

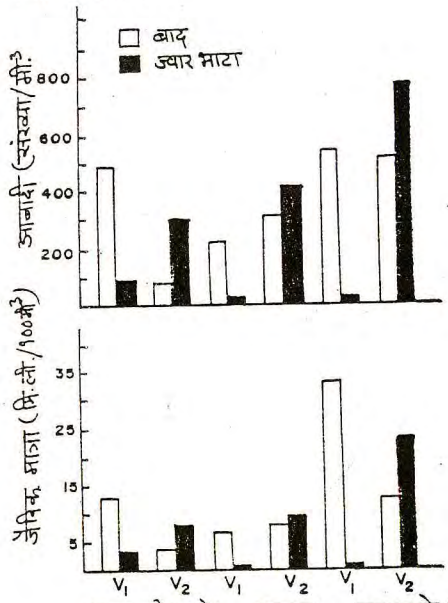

चित्र 2. वरसोवा खाड़ी (V_1) व खाड़ी (V_2) स्थानों से दूर तीन मौसमों में प्राणी प्लवकों की जैविक मात्रा व आबादी

तालिका -1 : मुंबई के निकटवर्ती तटीय जल से एकत्रित प्राणी प्लवकों में धातुओं की सांद्रता

समूह	तांबा	कोबाल्ट	मैंगनीज	निकिल	कैडमियम
			T_1		
कांपपॉड्स	17.19	17.82	39.07	75.00	8.79
किटोग्नथस व मेडूसा	16.25	15.63	50.00	90.91	10.28
			V_1		
कांपपॉड्स	60.00	12.50	98.13	45.45	11.14
माइसिड्स	53.75	7.08	39.17	28.79	9.57
दशपाद	57.50	7.50	28.44	42.05	11.57
			V_2		
कांपपॉड्स	64.37	10.00	102.19	43.82	11.35
माइसिड्स	33.75	6.25	15.63	38.64	9.42
दशपाद	50.00	10.00	89.38	45.45	10.28
			M_2		
कांपपॉड्स	174.38	10.94	100.94	54.55	12.21
किटोग्नथस	53.75	10.00	125.50	47.73	10.28

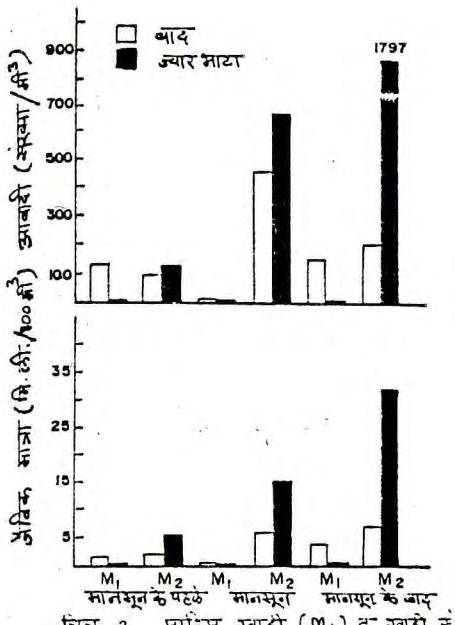

चित्र-3 माहिम खाडी (M_1) व खाड़ी स्थान पर तीन मौसमों के लि प्राणी प्लवकों की जैविक मात्रा

चित्र 4. थाना खाडी (T_1) व खाड़ी (T_2) स्था तीन मौसमों में प्राणी प्लवक की मात्रा व आबादी

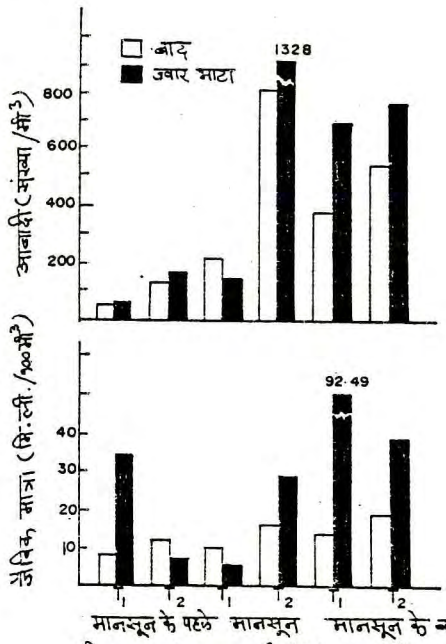

ऊपर चुने गये स्थानों पर अवलोकित भौतिकीय-रसायनिक घटक, कुछ निश्चित विशेष गुणों को दर्शाते हैं। खाड़ी ही एकमात्र ऐसा स्थान था जहां V_1 व M_1 पर ऑक्सीजन का मात्रांश (DO) निम्नतम हो जाता है और अप्रैल-मई की अवधि में तो अक्सर शून्य पर पहुंच जाता है। V_2, M_2 और T_2 स्थानों पर जल का प्रकार बेहतर था जिसका DO मात्रांश व खारापन अपेक्षाकृत अधिक और पौष्टिकता कम थी। प्रभावकारी तनुता के कारण, मिश्रित और वितरण प्रणालियां समुद्र तट से दूर जल में प्रदूषण की तीव्रता को कम कर सामान्य स्थिति में लाती हैं।

मुंबई के निकटवर्ती जल में, दूसरे तटीय क्षेत्रों की तरह, बहुशूक व माइसिडस की असाधारण प्रचुरता की अवधि को छोड़कर, प्रावारक पाद (कॉपपॉड्स) ही वनस्पति प्लवकों व प्राण प्लवकों के समुदाय पर छाये रहते हैं। दूसरी सामान्य जातियां दशपाद, किटोग्नथस, मेडूसा, बहुशूक, उदरपाद, सायफोनोफोरस, पटलक्लोम माइसिड्स, मत्स्य डिंबक (फिश लारवा) कंकतधर, उभयपाद आदि है।

वर्तमान अध्ययन के अंतर्गत, वरसोवा, व माहिम स्थानों का व्यवहार एक समान पाया गया (चित्र 2-4)। बाढ़ की अवधि के दौरान, खाड़ी क्षेत्र अधिकतम जैविक मात्रा के साथ न्यूनतम स्थायी स्टाक/आबादी दर्शाते हैं, जबकि अपेक्षाकृत ज्वारभाटा की अवधि के दौरान अप्रदूषित स्थान पर प्राणी समूह/प्रजातियों की विविधता में वृद्धि प्राणी प्लवकों के महत्वपूर्ण गुणधर्मों को दर्शाता है। थाना क्षेत्र उच्चतम जैविक मात्रा का व्यवहार भिन्न रुप से ही दिखाता है जिसमें श्लेषीय जीवों का अक्सर ज्यादा योगदान रहता है और यह जैव पद्धति में बहुत ही कम उपयोगी होता है। थाना खाड़ी उल्हास तटीय बंदरगाह समूह से जुड़ी है तथा इसीलिए इससे आने वाले पानी का आगमन वनस्पति व प्राणी प्लवकों के स्थायी स्टाक में वृद्धि करता है तथापि T_2 स्थान पर सीमित परिवर्तन देखा गया जो कि अपेक्षाकृत अधिकतम विविधता के कारण प्रदूषण की मात्रा को कम साबित करता है। मुंबई के निकटवर्ती तटीय जल से एकत्रित वनस्पतियों व प्राणी प्लवक की कुछ रिपोर्टों से यह संकेत मिलता है कि प्राय: स्थायी आबादी अप्रदूषित क्षेत्र की विशिष्टता बताती है और केवल मौसम की चरम स्थितियों को छोड़कर परिवर्तन अपेक्षाकृत सीमित सीमाओं के अंदर ही होता है, जबकि अप्रदूषित क्षेत्र में अधिकतम आपतन के समूह होते हैं जैसे सायफोनोफोरस पटलक्लोम उदरपाद, किटोग्नथ्स मत्स्य डिंब व लारवा आदि। खाड़ी क्षेत्रों में मेडूसा, कंकतधर माइसिड्स व बहुशूक का समूह प्रदूषण का सूचक है। किटोग्नथ्स जैसी अतिसंवेदनशील प्रजातियों का लुप्त हो जाना और जिसके फलस्वरूप उसकी विविधता में कमी होना, मुंबई के निकटवर्ती खाड़ी क्षेत्रों की अवनति को रोकने का प्रथम सूचक माना जा सकता है।

निकटवर्ती तटीय क्षेत्रों से एकत्रित वनस्पतियों व प्राणी प्लवकों में तांबा और मैंगनीज जैसी धातुओं की अपेक्षाकृत अधिक मात्रा पायी गयी (तालिका -1)। स्थान T_1 पर कोबाल्ट व निकिल जैसी धातुएं अधिक मात्रा में मिलीं जिसमें औद्योगिक स्राव काफी मात्रा में आता है। प्राणी प्लवकों के विभिन्न समूहों में कैडमियम की मात्रा में ज्यादा उतार-चढ़ाव नहीं देखा गया। प्राणी प्लवकों के विभिन्न समूहों में धातुओं की अधिक मात्रा इस बात का संकेत देती है कि प्रावारकपाद और श्लेषीय समूहों में तांबा, मैंगनीज व निकिल धातुओं की मात्रा ज्यादा पायी गयी जबकि माइसिड्स और दशपाद में इन धातुओं की मात्रा अपेक्षाकृत कम रही।

एक प्रदूषित वातावरण को अप्रदूषित क्षेत्र से कुछ विशेष लक्षणों के आधार पर पृथक किया जा सकता है, जो कि एक ठोस परिवर्तन दर्शाता है। नितलस्थ परिवर्तनशीलता से संबंधित निकटवर्ती तटीयजल में प्राणी प्लवकों के स्थायी स्टाक/आबादी की मात्रा में उतार-चढ़ाव, प्रदूषण प्रभावित परिवर्तन के सूचकांक के रुप में काम करता है। हालांकि प्रजातियों की विभिन्नता जैविक पद्धति के स्वास्थ्य को नियंत्रित करने का सबसे महत्वपूर्ण उपाय है, पशु वर्ग की विभिन्नता भी इस संबंध में आवश्यक सूचना देती है। निम्न नितलस्थ जैविक मात्रा

(शेष पृष्ठ -30 पर देखें)

समुद्री पर्यावरणीय प्रदूषण : एक सर्वेक्षण*

डॉ. शं. न. गजभिये [1] एवं शि. शं. गजभिये [2]

[1]राष्ट्रीय समुद्र विज्ञान संस्थान, क्षेत्रीय केंद्र,
[2]केंद्रीय मत्स्य शिक्षा संस्थान,

सात बंगला, वरसोवा, मुंबई - 400 061

पर्यावरण के महत्व से हम सभी भली-भांति परिचित हैं। हमारे बाहरी स्थान में जो भी सजीव या निर्जीव वस्तुएं हैं वे पर्यावरण का एक अविभाज्य अंग हैं। पृथ्वी एवं पृथ्वी के कक्ष में आने वाली हवा, पानी, समुद्र, पहाड़ियां, पेड़ों से भरे जंगल, जानवर आदि इस पर्यावरण का एक अंग हैं।

समुद्रीय पर्यावरण, तटीय क्षेत्र के साथ-साथ संपूर्ण देश के लिए भी अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। समुद्र प्रतिदिन के मौसम पर प्रभाव डालते हैं। इसके साथ-साथ इसमें छिपे असंख्य सजीव एवं निर्जीव संसाधन भी बढ़ते हुए प्रदूषण से प्रभावित हुए बिना नहीं रहते। यह प्रदूषण कहां से आता है और क्यों होता है, इस प्रदूषण का हमारे समुद्र और समुद्रीय संसाधनों पर क्या प्रभाव पड़ रहा है, यह जानना अत्यंत आवश्यक है। प्रस्तुत लेख में इन सभी कारणों का विस्तार से वर्णन किया गया है। साथ-साथ प्रदूषण नियंत्रण उपायों को विकसित करने के लिए देश में किये जा रहे कार्यक्रमों और परियोजनाओं की भी चर्चा की गयी है।

प्रदूषण और उसकी समस्याएं :

प्रदूषण की समस्या मूलतः मानव निर्मित है। पिछले दो दशकों में यह समस्या बहुत जटिल बन गयी है। एक तरफ बढ़ती हुई आबादी की समस्या है, और दूसरी तरफ हैं बढ़ते हुए उद्योग, जो हमारे पर्यावरण के लिए बड़े ही हानिकारक साबित हो रहे हैं। पर्यावरण की हानि तो हो ही रही है, साथ-साथ समुद्री संसाधन तथा अन्य जल संसाधनों पर इसका बुरा असर पड़ रहा है। बढ़ती हुई आबादी के लिए शुद्ध जल की समस्या हमारे लिए एक चिंता का विषय है। हमारे देश के ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों में अभी भी शुद्ध जल लोगों के लिए पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध नहीं है। साथ में जो भी जल की मात्रा है, वह भी प्रदूषित होती जा रही है। जब कभी भी जल मंडल में प्रदूषण आता है, जल के साथ-साथ जल में रहने वाले संसाधन भी उससे प्रभावित होते हैं। क्या होता है यह प्रदूषण ?

"मानव जाति द्वारा प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से निर्मित पदार्थ या ऊर्जा जो समुद्रीय पर्यावरण में या जल मंडल में प्रवेश करती है, जिसके फलस्वरूप इस पर्यावरण की अवनति हो जाती है। जिसमें जलीय संसाधनों की हानि, मानव स्वास्थ्य की हानि, समुद्री गतिविधियों में रुकावट आना, मत्स्य संपदा की हानि, जल के मूलभूत तत्त्व में असमानता आदि बातों का समावेश है।"

** "आर्थिक विकास में विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी का योगदान" विषय पर हिं. वि. सा. प., राष्ट्रीय समुद्र विज्ञान संस्थान, तथा गोवा विश्वविद्यालय द्वारा संयुक्त रूप से 3-4, सितंबर 1997 को गोवा में आयोजित संगोष्ठी में प्रस्तुत शोधपत्र।*

प्रदूषण कारकों को निम्नलिखित श्रेणी में बांटा जा सकता है :

1. घरों से निकलने वाले मल प्रवाह
2. कारखानों से निकलने वाली गंदगी
3. कृषि क्षेत्र से निकलने वाले प्रदूषक
4. नाभिकीय ऊर्जा क्षेत्र से आने वाले प्रदूषक
5. तापीय ऊर्जा क्षेत्र से आने वाले प्रदूषक
6. प्रदूषक तेल
7. ठोस रूप में आने वाली गंदगी

घरों से निकलने वाले मल प्रवाह :

यह गंदगी कभी-कभी उपचारित करके छोड़ी जाती है, परंतु बहुत बार तो बिना उपचारित किये ही छोड़ी जाती है। इस मैले पानी के आने से पानी में प्राणवायु की मात्रा में कमी आ जाती है। बी. ओ. डी. सूक्ष्म जीवाणु और खादों की मात्रा बढ़ जाती है, जो जलीय संसाधनों के लिए हानिकारक होती है। बहुजातीय जीव सिमटकर कुछ जातियों तक ही सीमित रह जाते हैं, मगर इनकी संख्या बढ़ जाती है। कभी-कभी तो यह इतनी बढ़ती है कि जल में एक विशिष्ट प्रकार का प्रदूषण होता है जिसे "यूट्रोफिकेशन" कहा जाता है। इस दौरान जो जहर पैदा होता है उससे मछलियों और अन्य जीवित संसाधनों की मौत भी होती है।

कारखानों से निकलने वाली गंदगी :

इसमें औद्योगिक प्रक्रिया से निकलने वाले रसायन और गंदगी का समावेश होता है। ऐसे कारखानों में रसायनों, खेतों, प्लास्टिक, दवाई आदि के कारखानों की गिनती की जा सकती है। कई रसायन कारखानों से निकले वाली गंदगी तो ढेर सारे जहरीले पदार्थों के साथ में रहती है। यह गंदगी जल मंडल के ऊपर विभिन्न प्रकार से प्रभाव डाल सकती है। इतिहास में तो बहुत सारे काले पन्ने हैं, जिसमें जापान के मिनामाता में हुई मरकरी (पारा) प्रदूषण की बात सर्वज्ञात है। इस प्रदूषण के कारण सौ से अधिक लोगों की मौत हुई, और हजारों अपाहिज हुए।

कृषि क्षेत्र से निकलने वाले प्रदूषक :

अनाज की पैदावर बढ़ाने के लिए विभिन्न प्रकार की खादों का उपयोग बड़ी मात्रा में किया जाता है, जिसमें फॉस्फोरस, नाइट्रोजन और सल्फेट आदि का समावेश है। जब पौधे बढ़ जाते हैं तब कीटाणु और बीमारियों से बचाने के लिए पेस्टीसाइड और दूसरी दवाइयों का प्रयोग किया जाता है। ये सभी चीजें बरसात के पानी में बहकर नदी और समुद्र में आकर मिलती हैं जिससे जल मंडल में प्रदूषण होता है।

नाभिकीय क्षेत्र से आने वाले प्रदूषक :

इस प्रदूषण स्रोत में परमाणु ऊर्जा भट्टी और विभिन्न परमाणु विस्फोटों द्वारा निकले हुए किरणोत्सर्गी पदार्थों का समावेश है। इस प्रदूषण से होने वाले परिणाम दूरगामी होते हैं।

तापीय ऊर्जा क्षेत्र से आने वाले प्रदूषण :

तापीय ऊर्जा केंद्र में ज्यादा तर कोयले का उपयोग किया जाता है। इस ऊर्जा निर्माण में मीठे पानी का या समुद्र के पानी का उपयोग किया जाता है। जब यह पानी बाहर छोड़ा जाता है तब इस पानी का तापमान बढ़ जाता है। यह पानी जब दूषित होकर बाहर आता है तब तापमान के साथ - साथ दूसरी गंदगी भी साथ होती है। यह प्रदूषण भी जैविक संसाधनों के लिए हानिकारक होता है।

तेल प्रदूषण :

यह प्रदूषण तेल रिसाव, समुद्र पर तेल यातायात से और भू-आधारित प्रदूषण से होता है। खाड़ी देशों से तेल के परिवहन के अतिरिक्त, उपतट तेल अन्वेषण एवं उत्पादन क्रियाकलाप, मुख्य बंदरगाहों में बंकर प्रचालन के दौरान, साथ ही साथ प्लव मूरिंग स्टेशनों पर तेल के स्थानांतरण से प्रचात्मक के दौरान भी विषेशकर दक्षिण-पश्चिम मानसून में, तेल रिसाव होता है। यह रिसाव तटीय संसाधनों के साथ-साथ समुद्र को गंभीर क्षति पहुंचाता है। समुद्री पारिस्थितिकी के साथ साथ तटीय उद्योगों की प्रचालनात्मक समस्याएं भी हो सकती हैं। यह समुद्री तटों को भी नुकसान पहुंचाते हैं। तेल प्रदूषण समस्या का विशिष्ट गुण यह है कि यह केवल एक देश

के तट तक ही सीमित नहीं है बल्कि पड़ोसी देशों को सम्मिलित करते हुए क्षेत्रीय प्रभाव डालता है।

ठोस रूप में आने वाली गंदगी :

ठोस रूप में आनेवाली गंदगी आज सभी देशों के लिए एक जटिल समस्या बनी हुई है। बहुत सारे देश इस कूड़े कचरे से परेशान हैं। कुछ देशों में इससे ऊर्जा निर्माण के प्रयास किये जा रहे हैं। बाकी जगह उसे या तो जलाया जाता है या ऐसे ही निर्जन जमीन पर फेंक दिया जाता है। भविष्य में इस गंदगी का इलाज नहीं किया गया तो मानव जाति के लिए यह एक मुसीबत साबित हो सकती है।

समुद्र विज्ञान एवं तटीय पर्यावरण :

पृथ्वी के संपूर्ण धरातल का 79% भू-भाग जल से घिरा हुआ है। जिसमें समुद्र जल की मात्रा 71% है। समुद्र को हम अपनी आखरी सीमाओं के रूप में जानते है। भू-संसाधनों में तेजी से होती हुई कमी के कारण पिछले कुछ वर्षों में समुद्र विज्ञान की ओर काफी ध्यान आकर्षित हुआ है। बहुत से वैज्ञानिक तो प्राणिजगत की उत्पत्ति समुद्र से ही मानते हैं। जल का महत्व हमारे जीवन में क्या है, यह तो हम सभी जानते हैं। मानव द्वारा समुद्र, खाड़ियों और नदियों का उपयोग सदियों से खाद्य व्यापार तथा यातायात के लिए किया जा रहा है पर वर्तमान शताब्दी में समुद्री संपदा प्राप्त करने के लिए उनके उपयोग में आशातीत वृद्धि हुई है। एक तरफ बढ़ती हुई आबादी की समस्या है और दूसरी तरफ बढ़ते हुए उद्योग जो हमारे पर्यावरण के लिए बड़े ही हानिकारक सिद्ध हो रहे हैं। पर्यावरण की हानि तो हो रही है, साथ-साथ समुद्री संसाधन तथा अन्य जल संसाधनों पर भी इसका बुरा असर पड़ रहा है। हिंद महासागर, उसके दो प्रमुख सागरों - अरब सागर और बंगाल की खाड़ी से घिरा हुआ है, और इस प्रदेश की खाड़ियों तथा नदी मुहाने इस विशाल जल समूह में आकार मिलते हैं। भारत के तटीय क्षेत्रों की लंबाई लगभग 7,500 किमी. के बराबर है। इसमें लगभग 55 प्रतिशत भाग पर समुद्र तट है, शेष भाग में चट्टानी पुलंबीभृगु है और नदी मुख सहित वर्गीकृत तट आता है।

विस्तृत समुद्र में खाद्य - श्रृंखला का क्रम इस प्रकार है : पादप प्लवक (प्राथमिक उत्पादन) - प्राणि प्लवक (द्वितीयक उत्पादन) और मत्स्य। स्पष्ट है कि प्लवकों से भरपूर क्षेत्र मछलियों (मत्स्य उत्पादन) के लिए खास तौर से उपयुक्त है। जल-तल प्राणियों के अध्ययन से प्राप्त परिणामों से संभावित मत्स्य संपदा के आकलन तथा समुद्री खेती के विकास में सहायता मिलती है।

समुद्र शैवाल वनस्पति आर्थिक रूप से महत्वपूर्ण संपदाओं में से है तथा इसका उपयोग कई देशों में खाद्य, चारा, औषधि तथा रासायनिक उद्योगों में किया जाता है। मैंग्रोव प्रायः समुद्री मुहानों में हैं, तथा पर्यावरण तंत्र में इसकी उपयोगिता महत्वपूर्ण है।

हवा और भूमंडल में होने वाली हानि तो तत्काल नजर आती है और महसूस भी होती है, मगर जल-मंडल में होनेवाली हानि की उपेक्षा होती गयी। इसमें भी पीने के पानी की तरफ ज्यादा ध्यान दिया गया और समुद्री प्रदूषण की तरफ असावधानी बरती गयी। उसका कारण है समुद्र की विशालता, उसमें थोड़ा सा प्रदूषित जल आ जाये तो वह आसानी से उस विशाल जल भंडार में समा सकता है, जिससे प्रदूषण का गांभीर्य नजर नहीं आता। समुद्र का पानी तो लोग पीते नहीं, इसलिए इस प्रदूषण की तरफ ज्यादा ध्यान नहीं दिया गया और न ही लोगों को इसकी तीव्रता मालूम हुई। साथ-साथ समुद्र में हर रोज होने वाली अनेक क्रियाएं जैसे ज्वार-भाटा, लहर, जल प्रवाह आदि उस प्रदूषण की तीव्रता को कम कर देती हैं, तथा इस प्रदूषण को एक ही जगह पर रहने नहीं देतीं। उसमें सिर्फ अपवाद है तेल प्रदूषण का। समुद्र तट पर जो शहर और कारखानें हैं उसमें से निकलने वाले प्रदूषण तत्त्वों से समुद्र तट के जल को भारी खतरा होने लगा है। इसके अलावा भू-मंडल से आने वाली नदियां भी प्रदूषण का मुख्य स्रोत हैं, जो आखिरकार समुद्र में ही आकर मिलती हैं। बढ़ती हुई आबादी से तट पर बसे हुए शहरों में लोगों की आवास समस्या ने गंभीर रूप धारण किया है। मुंबई जैसे महानगर में यह समस्या तो पहले से ही है। चारों ओर समुद्र से घिरे होने के कारण यहां जगह की भारी कमी है। मकान बनाने वालों (बिल्डर्स)

ने समुद्र तट के समीप की जमीन को भरकर मकान बनाना शुरु किया है। समुद्र के पानी को तो पीछे धकेला गया है मगर इससे तट को गंभीर ख़तरा हो गया है।

समुद्र विज्ञान का उपयोग अनवरत रूप से समुद्र से संबंधित समस्या दूर करने के लिए किया जा रहा है। तटीय क्षेत्रों के प्रबंधन, तेल क्षेत्र एवं बंदरगाहों के विकास, प्रदूषण नियंत्रण, तटीय औद्योगिक एवं घरेलू वर्ज्य पदार्थों के विसर्जन, समुद्री संपदा सर्वेक्षण आदि क्षेत्र में समुद्र विज्ञान का योगदान अविस्मरणीय है। समुद्र के अनेक उपयोगों में भूमि और जल का प्रयोग, मैग्रोव व प्रवाल भित्तियां, मत्स्य संसाधन, जल कृषि, समुद्री शैवाल संसाधन, समुद्री जल, विदेहन, यातायात, ऊर्जा आदि की चर्चा करना आवश्यक है। आज की परिस्थिति को देखते हुए समुद्री तट के विकास और प्रबंध के लिए महत्वपूर्ण आठ प्रमुख क्षेत्र हैं -

1. सागर
2. पर्यटन एवं मनोरंजनात्मक महत्व
3. मानव भूमि व्यवस्था एवं आवास
4. प्राकृतिक संसाधन एवं परितंत्र
5. आर्थिक विकास और सामाजिक पर्यावरण का स्तर
6. उद्योग एवं प्रौद्योगिकी
7. प्राकृतिक / सौंदर्य विषयक क्षमता
8. ऊर्जा / खनिज

ये सभी क्षेत्र आपस में बड़े सूक्ष्म और नाजुक ढंग से जुड़े हुए हैं। इन सभी विषयों पर विभिन्न अनुसंधान केंद्रों में अध्ययन हो रहा है, जिसमें प्रमुख हैं राष्ट्रीय समुद्र विज्ञान संस्थान, गोवा।

समुद्र विज्ञान संस्थान एवं महासागर विभाग :

सागर की वास्तविक उपयोगिता को समझते हुए भारत सरकार ने 1966 में गोवा में राष्ट्रीय समुद्र विज्ञान संस्थान की स्थापना की जो इस क्षेत्र में विस्तृत अनुसंधान एवं अवलोकन करके समुद्रीय संसाधनों के बारे में विभिन्न जानकारी संग्रह कर रहा है। राष्ट्रीय समुद्र विज्ञान संस्थान भारत में समुद्र अनुसंधान के क्षेत्र में अग्रणी संस्थान के रूप में उभरकर सामने आया है। उसके अनुसंधान व विकास कार्यक्रमों में तीन तरफ से घिरे हुए समुद्र का अन्वेषण शामिल है। अन्वेषण के मुख्य उद्देश्य हैं - भौतिक, रासायनिक, जैविक तथा भूगर्भीय प्रक्रियाओं के ज्ञान द्वारा सजीव एवं निर्जीव पदार्थों का दोहन, मानसून के बदलाव की भविष्यवाणी, उन्नतशील प्रक्रियाओं द्वारा समुद्रों का दोहन तथा देश की चुनौतीपूर्ण आवश्यकताओं को पूरा करने में समुद्रों का उपयोग। पिछले 30 वर्षों में अंतः व्यवस्था तथा दक्षता के विकास के फलस्वरूप देश में ही समुद्र से संबंधित किसी भी विशेष कार्य को संभालने की क्षमता पैदा हुई है। विकासशील देशों में भारत का स्थान समुद्र विज्ञान के क्षेत्र में सर्वप्रमुख है।

हमारी सरकार ने इस क्षेत्र में विस्तृत अन्वेषण और विदोहन पर बल देते हुए 1981 में "महासागर विकास" नाम से एक नये विभाग की स्थापना की है। राष्ट्रीय समुद्र विज्ञान संस्थान और महासागर विकास विभाग अन्य बातों के अलावा देश के तटवर्ती और समुद्री पर्यावरण की देखभाल करते हैं। 70 के दशक के मध्य से देश की दूसरी विभिन्न संस्थाओं में भी प्रदूषण पर अनुसंधान कार्य चल रहा है। जनसंख्या विस्फोट, औद्योगीकरण और तटीय परिप्रदेशों में असंसाधित अथवा अशंतः संसाधित वाहित पदार्थ प्रदूषण के ख़तरे को बढ़ावा दे रहे हैं। तथापि, यह स्थिति इतनी ख़राब नहीं है जितनी कि दुनिया के अन्य देशों में।

देश के आर्थिक और सामाजिक उत्थान के लिए सामुद्रिक संसाधनों के विदोहन और प्रबंध में इस संस्थान और विभाग की महत्वपूर्ण भूमिका है। यह विभाग समुद्र विज्ञान में अनुसंधान और विकास, भारत के अनन्य आर्थिक क्षेत्रों से सजीव तथा निर्जीव संसाधनों के सर्वेक्षण एवं मूल्यांकन, मानव संसाधन विकास एवं प्रदूषण नियंत्रण के उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए कार्य करता है।

1986 में भारत सरकार के पर्यावरण और वन मंत्रालय द्वारा एक अधिसूचना जारी की गयी है जो बाद में 1991 में संशोधित की गयी है। इस अधिसूचना के द्वारा तटीय क्षेत्रों को तटीय विनियम क्षेत्र घोषित करते

हुए तटीय विनियम क्षेत्र में गतिविधियों को विनियमित किया गया है। यह तटीय राज्यों के आर्थिक अधिकार क्षेत्र को तट रेखा से 200 से 350 मील क्षेत्र तक बढ़ाता है। इस व्यवस्था के अनुसार लगभग 20 लाख वर्ग किमी. का क्षेत्र भारत के राष्ट्रीय अधिकार क्षेत्र में आ गया है। उस क्षेत्र में सजीव तथा निर्जीव संसाधनों के उपयोग का अधिकार देश के पास होता है। इन सभी बदलावों के कारण इन संस्थाओं पर भारी जिम्मेदारी आ गयी है।

❑❑❑

संचार / प्रसार माध्यमों के बढ़ते कदम

(पृष्ठ -21 का शेष भाग)

बरतनी चाहिए अन्यथा उसके दुरुपयोग की संभावना बढ़ जाती है। आज देखिए, रेडियो, टेलीविजन, पत्र-पत्रिकाओं का उपयोग विभिन्न वर्ग चाहे वह व्यापारी हों अथवा राजनैतिक शक्तियां अपने स्वार्थ को मद्दे नजर रखकर करने का प्रयास कर रहे हैं। आज स्थिति यह है कि यदि कोई राजनैतिक दल या व्यापारी वर्ग किसी टेलीविजन चैनल को खरीद लेता है तो उसके माध्यम से वह राष्ट्र की सत्ता, अर्थव्यवस्था तथा सामाजिक जीवन पर भरपूर प्रभाव डाल सकता है। लंदन विश्वविद्यालय में कार्यरत महान भारतीय दार्शनिक प्रो. ए. जे. अय्यर ने कहा है कि बुरा प्रसार अच्छाई को भी भ्रष्ट कर देता है। इसलिए मानवता की भलाई और राष्ट्रीय हित में यह आवश्यक है कि सूचनाओं का प्रसार सही तौर पर एक विवेकपूर्ण दृष्टिकोण के साथ हो। विज्ञान अपने विकास क्रम में नयी-नयी तकनीकों की खोज या आविष्कार करता है। इस सहज एवं प्राकृतिक प्रक्रिया पर तो रोक लगाना संभव नहीं है परंतु इनका सही तौर पर उपयोग करना हमारी जिम्मेदारी बनती है। 1934 में फर्मी ने परमाणु विखंडन की खोज की। एक असीमित ऊर्जा के स्रोत की संभावना को प्रस्तुत किया। अब यदि मानव परमाणु अस्त्र बनाकर उपयोग करने लगे तो उसमें विज्ञान का क्या दोष है। सदुपयोग तथा दुरुपयोग की अहम् जिम्मेदारी तो हमारी है।

❑❑❑

जीव विज्ञान द्वारा मुंबई के निकटवर्ती समुद्र तटीय प्रदूषण का अध्ययन

(पृष्ठ -25 का शेष भाग)

में सम्मिलित तलछट में कार्बनिक पदार्थों की अधिकतम मात्रा वातावरण के लगातार खराब होने का संकेत देती है। प्रभावशाली प्रजातियां व उनके समुदाय का अनुपात और उनके आपेक्षिक प्रदूषण का संचय सामुद्रिक जैविक पद्धति में प्रचलित प्रदूषण के प्रकार को वर्गीकृत करके अच्छी तरह समझा जा सकता है।

आभार :

लेखक-द्वय इस अध्ययन हेतु सुविधा उपलब्ध कराने के लिए राष्ट्रीय समुद्र विज्ञान संस्थान, गोवा के निदेशक और उसके क्षेत्रीय केंद्र, मुंबई के प्रभारी वैज्ञानिक का आभार प्रदर्शित करते हैं।

❑❑❑

सूचना

भारत की सभी भाषाओं में विज्ञान के प्रसार हेतु 'नेशनल सेंटर फॉर साइंस कम्यूनिकेटर्स' नामक एक संस्था का गठन किया गया है। इसके अंतर्गत विज्ञान के प्रसार से संबंधित सभी लेखक, आकाशवाणी, दूरदर्शन इत्यादि से संबंधित वक्ता, पटकथा लेखक, फिल्म निर्माता, मंच प्रदर्शक, चित्रकार, कथाकार आदि आते हैं। अंग्रेजी में इन सभी प्रसारकों की एक डायरेक्टरी निकालने की योजना है। अतः इस प्रकार के सभी महानुभाव अपना नाम, पता, आयु, लिंग, फोन, फैक्स, ई-मेल, विज्ञान के प्रसार की किस विधा से संबद्ध (उदाहरणार्थ - विज्ञान कथा लेखक, दूरदर्शन वक्ता इत्यादि) । इस सब की जानकारी शीघ्र से शीघ्र निम्न पते पर भेज दें।

निवेदक : **ए. पी. देशपांडे,**
कार्यवाहक सचिव

नेशनल सेंटर फॉर साइंस कम्यूनिकेटर्स,
द्वारा - मराठी विज्ञान परिषद, विज्ञान भवन,
वी. एन. पुरव मार्ग, सायन-चूना भट्टी,
मुंबई - 400 022.

गुजरात अल्कलीज एंड केमिकल लि. द्वारा लखीगाम के तटीय पानी में अपशिष्ट के मोचन का समुद्री पर्यावरण पर प्रभाव*

मोरेश्वर म. सबनीस एवं अनिरुद्ध राम

राष्ट्रीय समुद्र विज्ञान संस्थान, क्षेत्रीय केंद्र, मुंबई - 400 061

लखीगाम के समुद्री तट पर बढ़ते औद्योगिकीकरण को देखते हुए गुजरात प्रदूषण नियंत्रण मंडल ने एक ऐसी नीति घोषित की है जिसके तहत किसी भी औद्योगिक इकाई द्वारा उत्पादन शुरू करने से पहले पर्यावरण सुरक्षा-व्यवस्था का पर्याप्त ध्यान दिया जाना अत्यावश्यक हो गया है। गुजरात प्रदूषण नियंत्रण मंडल द्वारा घोषित विशेष विवरण के अनुसार आई. पी. सी. एल और इंडो-गल्फ फर्टिलाइजर कंपनियों ने पहले से ही अपना-अपना अपशिष्ट पानी उपयुक्त तटीय पानी में छोड़ने की व्यवस्था बना ली है। जी. ए. सी. एल. ने अपने परिसर में कास्टिक सोडा तथा ऊर्जा उत्पादक इकाई स्थापित करने का प्रस्ताव किया है। इन इकाइयों से उत्पन्न कुल 6000 मी^{3}/दिन के हिसाब से व्यर्थ पानी समुद्र तट से 3 किमी. दूर अंतर्ज्वारीय भाग में 1.5 मी. नीचे तथा उपज्वारीय भाग में समुद्र की पेंदी से 1 मी. नीचे खोदकर पाइप लाइन द्वारा छोड़ने की अपेक्षा है। व्यर्थ पानी का गुणधर्म, पीएच, घुलित ऑक्सीजन, जैविक ऑक्सीजन मांग तथा पोषाहार, पेट्रोलियम हाइड्रोकार्बन (पी.एच.सी.) फेनाल्स और भारी धातु के लिहाज से दक्षिण गुजरात के तटीय भाग के गुणधर्म के अनुसार अपेक्षित है। लखीगाम का तटीय पानी अति कीचड़ युक्त है जिसमें अघुलित ठोसों की मात्रा 5000 मिग्रा/लीटर तक पायी जाती है। इसका मुख्य कारण इस क्षेत्र में तेज ज्वारीय धारा है। इस क्षेत्र में घुलित ऑक्सीजन सामान्य तथा 5 मिग्रा/लीटर से ऊपर पायी जाती है। फॉस्फेट और नाइट्रेट की मात्रा निस्संदेह अधिक है, फिर भी नाइट्राइट और अमोनिया की मात्रा एक स्वस्थ्य तटीय समुद्री पर्यावरण में संभावित मात्रा के बराबर है।

प्रस्तावना

तीन मुख्य औद्योगिक इकाइयों गुजरात अल्कलीज एंड केमिकल्स लिमिटेड (जी.ए.सी.एल.) [अधिकतम कास्टिक सोडा उत्पादक], इंडो-गल्फ फर्टिलाइजर एन्ड केमिकल्स कार्पोरेशन लिमिटेड (कॉपर कैथोड उत्पादक) और आई.पी.सी.एल. (ईथाइलीन विनायल क्लोराइड मोनोमर, इथाइलीन डाईऑक्साइड उत्पादक) ने क्रमानुसार 6000 मी^{3}/दिन, 5300 मी^{3}/दिन और 40,000 मी^{3}/दिन के हिसाब से अपना, अपना उपचारित अपशिष्ट जल लखीगाम के तटीय समुद्र में छोड़ने की योजनाएं बनायी है। इन इकाइयों से छोड़े गये व्यर्थ पानी की कुल मात्रा 51,300मी^{3}/ दिन के लगभग हो सकती है। गुजरात प्रदूषण नियंत्रण मंडल (गु.प्र.नि.म) ने अनुमोदित किया है कि व्यर्थ पानी को शुद्ध करके प्रदूषकों की मात्रा कम से कम रखी जाये और उनकी मात्रा गु.प्र.नि.मं. द्वारा दिये गये ब्यौरे के अनुसार होनी चाहिए तथा उसके बाद ही तटीय पानी में निश्चित दूरी पर छोड़ा जाये। उपरोक्त औद्योगिक इकाइयों के अतिरिक्त अंबेटा से दहेज तक जहाजी माल वाहन के लिए तीन पोर्ट "टर्मिनल" भी विचाराधीन हैं। अतः यह निश्चित है कि निकट भविष्य में समुद्री पर्यावरण में मानवीय हस्तक्षेप कई गुना बढ़ जायेगा। छोड़े गये अपशिष्ट का प्रभाव सामान्य तौर पर

"आर्थिक विकास में विज्ञान एंव प्रौद्योगिकी का योगदान" विषय पर हिं. वि. सा. प., राष्ट्रीय समुद्र विज्ञान संस्थान, तथा गोवा विश्वविद्यालय द्वारा सयुंक्त रूप से 3-4 सितंबर 1997 को गोवा में आयोजित संगोष्ठी में प्रस्तुत शोध पत्र।

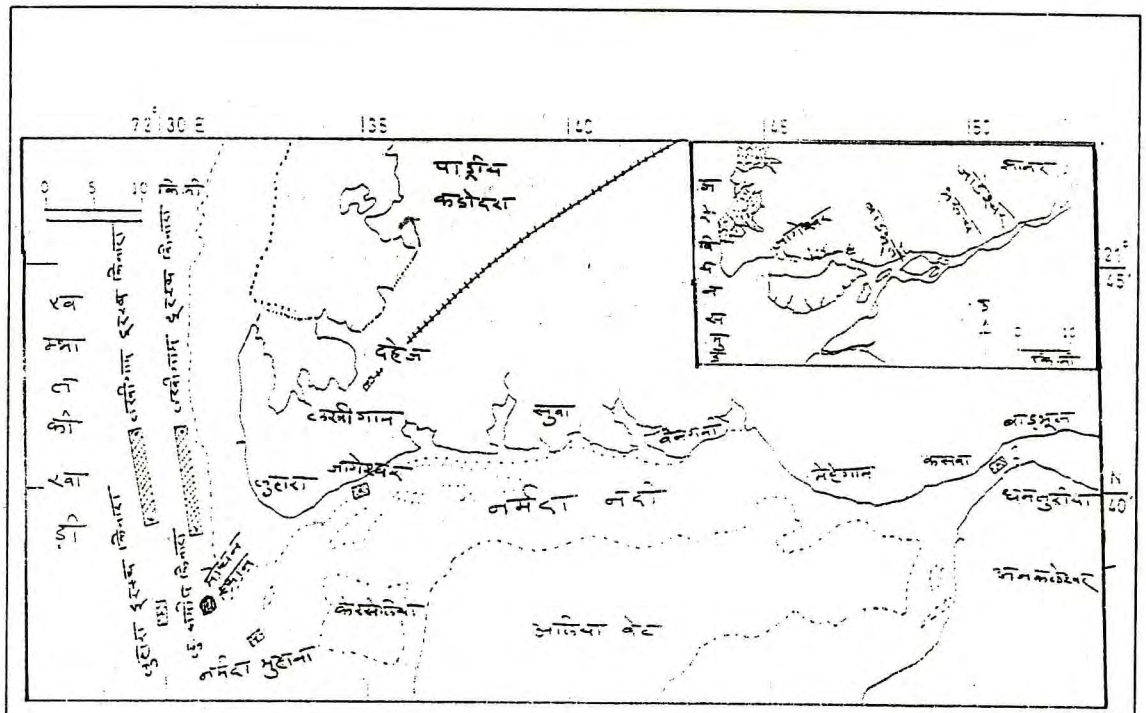

चित्र-1 : नमूने एकत्रित करने के क्षेत्र का मानचित्र

कई कारणों पर निर्भर करता है; 1) छोड़े गये अपशिष्ट का गुण और मात्रा, 2) ग्रहण करने वाले पानी की पाचन क्षमता, 3) उस क्षेत्र की पारिस्थितिक संवेदनशीलता का मान । आजकल अपशिष्ट के मोचन की जगह का निर्धारण इस आधार पर किया जाता है कि उस जगह से उचित दूरी पर ही समुद्री पर्यावरण अपनी पूर्ण स्थिति को ग्रहण कर ले । इसके लिए ज्वारीय धारा, परिसंचरण, स्तरण, समुद्रीय पेंदी का अध्ययन, जलीय गुणधर्म, तलछट का गुणधर्म और जैविक लक्षण आदि के बारे में विस्तृत जानकारी होना आवश्यक होता है ।

प्रस्तुत लेख एन. आई. ओ. द्वारा 1993-96 में पर्याप्त आंकड़ा आधार उत्पन्न करने के लिए लखीगाम के तटीय क्षेत्र तथा नर्मदा खाड़ी में किये गये विस्तृत सर्वेक्षण का एक अंश है तथा इसमें पिछले लगभग 15 सालों में इस क्षेत्र में पानी के गुणधर्म में हुए परिवर्तन को प्रकट करने का प्रयास किया गया है ।

लखीगाम का तटीय क्षेत्र भरुच शहर से लगभग 50 किमी. की दूरी पर स्थित है और नर्मदा नदी जो कि मीठे पानी का एक बड़ा स्रोत है, यहां आकर खंभात की खाड़ी में मिलती है । जी. ए. सी. एल. संयंत्र के 10 किमी. के घेरे में कुल जनसंख्या लगभग 14,000 के आपस-पास है जिसमें से अधिकतम जनसंख्या (लगभग 4,000) दहेज गांव के इर्द-गिर्द है ।

लखीगाम क्षेत्र में ज्वारीय प्रभाव बहुत ज्यादा होता है और औसतन ज्वारीय पानी का उतार-चढ़ाव 8.3 मीटर तक होता है । यह उतार-चढ़ाव नर्मदा नदी के मुहाने पर 7.2 मीटर होता है और घटकर भाड़ भूत और भरुच में क्रमानुसार 3.6 मीटर तथा 1.8 मीटर हो जाता है । नर्मदा खाड़ी में ज्वारीय धारा की गति 2 मी/सेकंड से भी अधिक होती है और भाटा के समय अधिकतम पायी जाती है । लखीगाम ऑफ की परिचालन आकृति दीर्घ वृत्ताकार है जिसका मुख्य अक्ष एक ओर किनारे के समानांतर है और

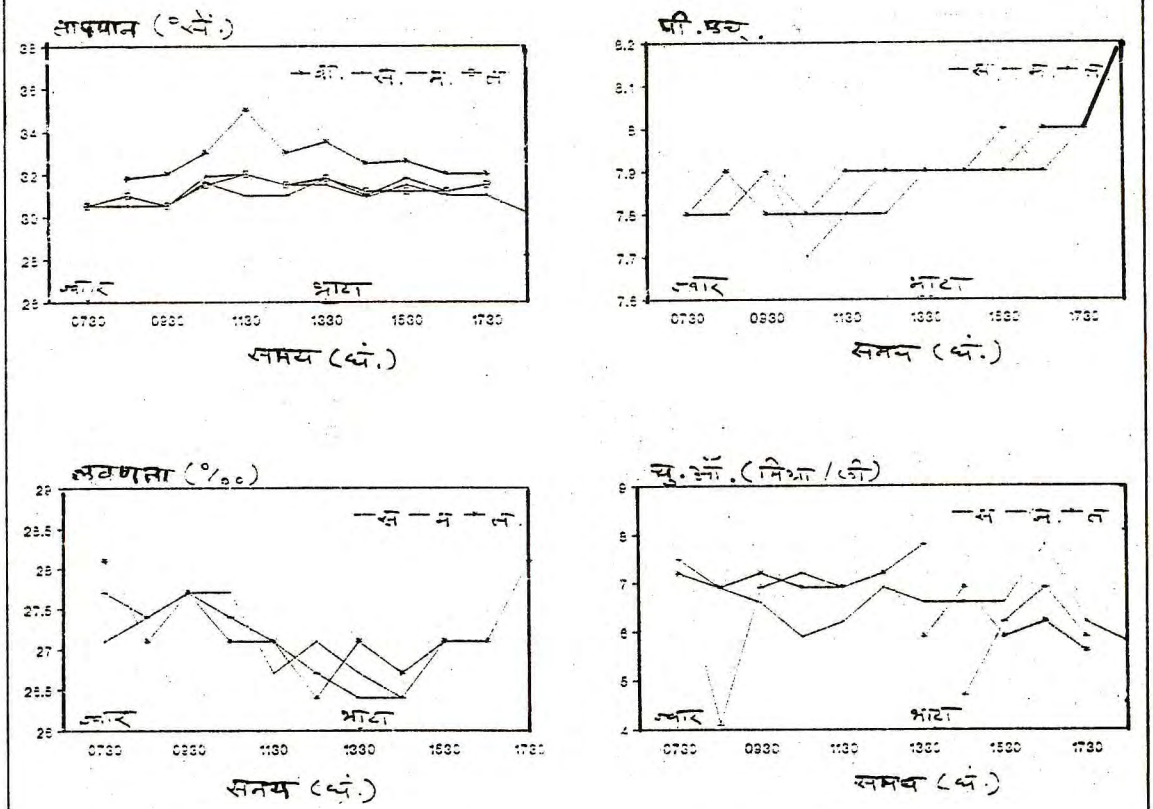

चित्र-2 : 13 अक्तूबर 1995 को लखीगाम के समीप के तटीय जल के गुणधर्म

दूसरा लघु अक्ष छोटा है और तट के लंब के रूप में पाया जाता है। चित्र-1 में दर्शायी गयी जगहों से पानी तथा मिट्टी के नमूने एकत्रित किये गये और 1993 तथा 1995 के परिणामों से इनकी तुलना की गयी तथा इसका उपयोग पानी के गुणधर्म पर होने वाले प्रभाव को ज्ञात करने के लिए किया गया।

सामग्री तथा विधि

पानी की सतह का नमूना प्लास्टिक की साफ बाल्टी से तथा तल का नमूना निस्किन सैंप्लर से इकट्ठा किया गया। घुलित ऑक्सीजन के परीक्षण के लिए शीशे की 125 मिली. की बोतल में पानी इकट्ठा करके उसमें तुरंत "विन्कलर ए" तथा "विन्कलर बी" मिलाकर उपस्थित घुलित ऑक्सीजन को स्थायी कर दिया गया। अवक्षेप को HCl में घुला कर सोडियम थायोसल्फेट के साथ अनुमापन करके घुलित ऑक्सीजन की मात्रा ज्ञात की गयी। जैविक ऑक्सीजन मांग के लिए 300 मिली. की बोतल भर कर उसको पांच दिन के लिए "इन्क्यूबेट" करके उपरोक्त विधि द्वारा उपस्थित घुलित ऑक्सीजन का परीक्षण कर प्रारंभिक ऑक्सीजन की मात्रा में से घटाकर जैविक ऑक्सीजन मांग की मात्रा ज्ञात की गयी। पुष्टिकारकों (न्यूट्रिएन्टस) के परीक्षण के लिए प्लास्टिक बोतल में नमूने इकट्ठे किये गये।

परिणाम तथा विवेचन

समय के साथ (तटीय पानी के) तापक्रम पीएच, लवणता तथा घुली ऑक्सीजन में होने वाले बदलाव का एक पैटर्न चित्र-2 में दिखाया गया है।

तापमान :- लखीगाम के तटीय पानी तथा खाड़ी के पानी का तापमान वायुमंडल के तापमान के अनुसार परिवर्तित होता है। सतह तथा तल के तापमान में कोई महत्वपूर्ण परिवर्तन नहीं पाया गया क्योंकि पानी ऊपर से नीचे अच्छी तरह से मिश्रित होता है।

पीएच (pH) :- जैसा कि समुद्री जल में अपेक्षित है, तटीय पानी का पीएच अल्प सीमा में परिवर्तित होता है। यह 7.6 से 8.2 के बीच पाया गया। जागेश्वर के पास नर्मदा नदी का पीएच गर्मी की ऋतु में क्षारीय पाया गया जो कि 8.4 के आस-पास था। खाड़ी के आंतरिक भाग में भी पीएच का अस्थायी बदलाव पाया गया जब कि खाड़ी के मुहाने पर यह बदलाव कोई महत्वपूर्ण नहीं था।

अघुलित पदार्थ :- लखीगाम के तटीय पानी में अघुलित पदार्थों की मात्रा 5000 मिग्रा/लीटर होने की वजह से यहां का पानी धुंधला तथा कीचड़युक्त है। अति तीव्र ज्वारीय धारा की वजह से पेंदी का सूक्ष्म तलछट तितर-बितर होता रहता है फलतः यहां के पानी में अघुलित पदार्थों की मात्रा में व्यापक परिवर्तन पाया जाता है।

लवणता :- खाड़ी के पूर्वीय किनारे से मिलती हुई कई नदियों द्वारा लाये गये मीठे पानी के प्रभाव के कारण लखीगाम के तटीय भाग से दूर तक लवणता में काफी परिवर्तन पाया जाता है। गर्मी के दिनों में यह लवणता औसतन 25 से 37% के बीच पायी जाती है। नर्मदा नदी के कम लवणयुक्त पानी के तटीय क्षेत्र में अपप्रवाह के प्रभाव के कारण भाटा के समय लवणता में काफी गिरावट पायी जाती है। यद्यपि तटीय पानी ऊपर से नीचे तक अच्छी तरह मिश्रित होता है फिर भी ज्वार-भाटा चक्र के समय सतह और तल की लवणता में प्रायः अंतर पाया जाता है। फिर भी खाड़ी के मुहाने में समुद्री पानी का ज्यादा प्रभाव पाया जाता है और औसतन लवणता 35% से भी ज्यादा पायी जाती है जबकि खाड़ी के मध्य भाग में 5% हो जाती है तथा भाटा के समय भाड़भूत में लगभग शून्य के बराबर हो जाती है।

घुलित ऑक्सीजन तथा जैविक ऑक्सीजन मांग :- लखीगाम के तटीय पानी में घुलित ऑक्सीजन साधारणतया 5 मिग्रा / लीटर से ऊपर ही पायी गयी जिससे यह स्पष्ट होता है कि तटीय क्षेत्र तथा नर्मदा खाड़ी का पानी स्वस्थ तथा ऑक्सीकारक है। एन. आई. ओ. द्वारा किये गये 1979 के शोध कार्य से यह प्रकट होता है कि भरुच के इर्द-गिर्द खाड़ीय परिच्छेद में अंकलेश्वर की औद्योगिक इकाइयों के अपशिष्ट तथा भरुच शहर के घरेलू मलजल प्रवाह से घुलित ऑक्सीजन की मात्रा में कमी पायी गयी। लखीगाम के तटीय पानी में जैविक ऑक्सीजन मांग 0.2 से 3.0 मिग्रा/लीटर पायी गयी तथा तलीय पानी में अपेक्षाकृत कम जैविक ऑक्सीजन मांग पायी गयी।

फॉस्फोरस और नाइट्रोजन यौगिक :- यद्यपि फॉस्फोरस और नाइट्रोजन यौगिक पानी में कम मात्रा में उपस्थित होते हैं फिर भी पानी में प्रारंभिक उत्पादकता में उनकी अहम भूमिका होती है क्योंकि पादप प्लवक (फाइटोप्लैंक्टन) के विकास में उनका प्राणाधार उपयोग होता है। शोध कार्य से प्राप्त आंकड़ों से पता चलता है कि तटीय तथा खाड़ीय पानी में फॉस्फेट तथा नाइट्रेट अधिक मात्रा में उपलब्ध हैं। ऐसा होना खाड़ी में प्राप्त मात्रा का प्रतीकात्मक है और कई नदियों द्वारा लायी गयी अतिरिक्त मात्रा के परिणामस्वरुप होता है। यद्यपि फॉस्फेट का स्तर 1993 और 1995 के बीच लगभग एक जैसा रहा किंतु नाइट्रेट की सांद्रता उसी अवधि में 2 से 4 गुना बढ़ गयी (उदा. 305-881 माइक्रोग्राम / लीटर)। ऐसा होना स्वाभाविक है क्योंकि समय के साथ-साथ खेती में उर्वरकों का उपयोग बढ़ता जाता है जो नदियों के माध्यम से खाड़ी में पहुंचता है। नाइट्राइट और अमोनिया की सांद्रता तटीय और नर्मदा खाड़ी के पानी में कम पायी गयी जो कि इस क्षेत्र के पानी के प्राकृतिक गुणधर्म को प्रस्तुत करती है और यह प्रकट करती है कि इस क्षेत्र का पानी ऑक्सीकारक है।

(शेष पृष्ठ - 44 पर देखें)

टिप्पणियां

1. मनुष्य को प्रभावित करने बाले पशु - विषाणु रोग :

पशुओं में होने वाले अनेक रोग ऐसे हैं जो मनुष्यों को भी प्रभावित करते हैं। इन बीमारियों को जूनोसिस या जूनोटिक रोग कहते हैं। बहुधा पशुपालक अथवा पशु परिचारक जानकारी के अभाव में इन रोगों से ग्रस्त हो जाते हैं। आमतौर पर प्रकृति में विषाणुओं की निरंतरता एक ही जाति के प्राणियों के संक्रमण द्वारा बनी रहती है परंतु कुछ विषाणु ऐसे होते हैं जो अनेक प्रकार के प्राणियों को संक्रमित करते हैं। विषाणु जनित जूनोटिक रोगों, उनके पोषक एवं संचरण के तरीकों की जानकारी तालिका - 1 में दी गयी है।

सामान्यत: कीटों द्वारा संचरित होने वाले रोगों के विषाणुओं के फैलने में ये संधिवाद प्राणी मध्यस्थ पोषक का कार्य करते हैं। पूरे विश्व में लगभग 66 विषाणु जनित रोग कीट वाहित विषाणु के कारण होते हैं। इन कीटों में किलनियां, मच्छर व मक्खी सम्मिलित हैं। ये कीट रुग्ण पशुओं का खून चूसते समय खून के साथ विषाणु ग्रहण

तालिका-1
जूनोटिक विषाणुओं के संचरण की विधियां

विषाणु जनित रोग	पोषक पशु	संचरण की विधि
गो-चेचक	गोवंशीय पशु	त्वचा छिलने व संपर्क द्वारा
कूट गो - चेचक	गोवंशीय पशु	
बंदर - चेचक	बंदर	
ऑर्फ इक्थायमा विषाणु रोग	भेड़ व बकरी	
बी विषाणु रोग	बंदर	काटने से
हैण्टान विषाणु रोग	कृंतक (चूहे)	मूत्र के संपर्क में आने से
अलक रोग (रैबीज)	कुत्ता, गीदड़, भेड़िया चमगादड़, नेवला	काटने से
स्फोटयुक्त मुखीय शोध (बेसिकुलर स्टोमेटाइटिस)	गोवंशीय पशु	संपर्क द्वारा
इन्फ्लूएन्जा	शूकर, घोड़े व पक्षी	श्वास द्वारा
लसीका कोशीय कोरियो मेनिन्जाइटिस	कृंतक (चूहे)	कृंतक के संपर्क द्वारा

कर लेते हैं। पुन: ये दूसरे पशुओं अथवा मनुष्यों में खून चूसते समय विषाणुओं को उनके शरीर में प्रविष्ट करा देते हैं। कीट - वाहित विषाणु जूनोसिस की जानकारी तालिका - 2 में दी गयी है।

तालिका -2
कीटक - वाहित जूनोटिक विषाणु रोग

रोग	प्रारंभिक पोषक पशु	वाहक कीटक
ईस्टर्न इक्वाइन इसेफेलाइटिस	पक्षी व घोड़े	मच्छर
वेस्टर्न इक्वाइन इसेफेलाइटिस	पक्षी व घोड़े	मच्छर
वेनेजुएलन इक्वाइन इसैफेलाइटिस	पक्षी व घोड़े	मच्छर
जापानी बी इन्सेफेलाइटिस	पक्षी व शूकर	मच्छर
पीत ज्वर	बंदर	मच्छर
किलनी-वाहित मस्तिष्क शोध	स्तनपायी प्राणी	किलनी
क्यासानुर फॉरेस्ट रोग	बंदर	किलनी
लूपिंग इल	भेड़	किलनी

रोगों से बचाव के उपाय - प्रत्येक पशु-पालक को, पशु को होने वाली बीमारियों की थोड़ी जानकारी होना आवश्यक है जिससे उन्हें अपने व पशु के स्वास्थ्य के लिए बेहतर प्रबंध में सहायता मिले। इन रोगों से बचाव के लिए निम्नलिखित सावधानियों को ध्यान में रखना चाहिए। विसंक्रमण व सफाई पर पर्याप्त ध्यान देना चाहिए। वर्तमान में अपनाये जा रहे सघन पशु - पक्षी पालन के तौर तरीकों से स्थानीय पर्यावरण पशुओं के मल, मूत्र, बाल व पंखों से प्रदूषित हो जाता है। अत: रोगी पशु को अलग व सुरक्षित स्थान में रखना चाहिए तथा मृत पशुओं व उनके मल - मूत्र को जमीन में गहरा गड्ढा खोदकर दबाना चाहिए। पशुपालकों को चेहरे ढकने वाले 'मास्क' (जैसा प्लेग प्रकोप के समय प्रयुक्त किया गया था), का उपयोग करना चाहिए तथा रोगी पशु को छूने के बाद अपने हाथ - पैरों को साबुन से अच्छी प्रकार धोना चाहिए। संक्रमित पशुशाला व उसके आस - पास के लिए दूसरे कपड़े व पोशाक (यथा एप्रन डांगरी) होने चाहिए जिन्हें बाहर पहन कर नहीं जाना चाहिए।

पशुशाला का विसंक्रमण - पशु पालकों को अपनी पशुशालाओं व आसपास के स्थान को विषाणुनाशक रसायनों से विसंक्रमित करते रहना चाहिए जिससे पशु के खाने व पानी के बर्तन जीवाणु व विषाणु रहित हों। ऐसे कुछ सस्ते विसंक्रामक रसायनों की सूची तालिका-3 में दी जा रही है।

तालिका - 3 विसंक्रामक एवं उनके प्रयोग

विसंक्रामक का नाम	प्रयोग
सोडियम हाइपोक्लोराइट (क्लोराक्स)	पीने के पानी, भोजन के बर्तन/दुग्धशाला के बर्तन
लाई (2% सोडियम हाइड्रोक्लोराइड)	दुग्धशाला के बर्तन व पशुशाला के फर्श
आयडोफोर अपमार्जक (वीटाडीन) फार्मलीन	बर्तन व पीने का पानी, पशुओं की बिछावन व पशुशाला
फीनॉल संजात (लाइसॉल व डेटाल)	2.5% जलीय घोल - हाथ, पिंजड़ों तथा पशुशाला का फर्श धोने हेतु

कीटों का नियंत्रण - कीट - वाही विषाणुओं द्वारा उत्पन्न होने वाले रोगों की रोकथाम के लिए कीटों के नियंत्रण की आवश्यकता है। कुछ सावधानियां जो इनके नियंत्रण हेतु बरतनी चाहिए :

1. पशुशालाओं तथा पशुपालकों के आवासों में व आस - पास के स्थानों जैसे - नालियां, मल-मूत्र के स्थानों या अन्य नमी वाले स्थानों में कीटनाशी रसायनों का छिड़काव करना चाहिए।
2. वनों में रहने वाले पशु - पालकों को अपने पशुओं को जंगली जानवरों से मिलने नहीं देना चाहिए।
3. पशुशालाओं की दीवारों के छिद्रों व दरारों को बंद कर देना चाहिए जिससे उसमें पशुओं की किलनियां या अन्य बाह्य परजीवी न छिप सकें।
4. कीटनाशक रसायन मिले पानी से पशुओं को नियमित रुप से स्नान कराना चाहिए।
5. पशु गृहों के दरवाजों, खिड़कियों आदि में कीटों को रोकने वाली जालियां तथा मच्छरदानियों का प्रयोग किया जाना चाहिए।

टीकाकरण - कुछ भयानक व असाध्य रोगों के लिए पशुओं का टीकाकरण अवश्य करा देना चाहिए। उदाहरण के तौर पर अलर्क या रेबीज कुत्तों के साथ - साथ अन्य पालतू पशुओं व मनुष्यों को भी प्रभावित करती है। इसमें मृत्यु अवश्यसंभावी होती है। प्रारंभिक पोषक पशुओं तथा कुत्तों का टीकाकरण इस बीमारी के लिए करा देना चाहिए।

पशु - चिकित्सकों व पशु - चिकित्सा वैज्ञानिकों से निरंतर संपर्क - पशु - चिकित्सा के क्षेत्र में संलग्न अधिकारियों व कर्मचारियों से निरंतर संपर्क बनाये रखने से विभिन्न समय पर होने वाले जूनोटिक रोगों की जानकारी पशु - पालकों को मिलती रहेगी और समय रहते उनके पशुओं व उनकों ऐसे रोगों से बचाव के लिए आवश्यक कदम उठाये जा सकेंगे तथा बीमारी को महामारी का रुप लेने से रोका जा सकेगा।

डॉ. ए. बी. पांडेय एवं डॉ. प्रियव्रत स्वाई,
भारतीय पशु-चिकित्सा अनुसंधान
संस्थान परिसर,
मुक्तेश्वर - नैनीताल (कुमाऊं) - 263 138

2. खेलस्पर्धाओं में औषधि-विज्ञान का बढ़ता दुरुपयोग

खेलों में हारना या जीतना उतना महत्त्वपूर्ण नहीं है जितना कि खेल भावना (स्पोर्टसमैन स्प्रिट) बनाये हुए भाग लेना। सभी खेल कूद प्रतियोगिताओं का यह एकमूल मंत्र है। अंतर्राष्ट्रीय नव-ओलम्पिक, जो 1896 से प्रारंभ हुए, तथा जिनके जनक फ्रांस के पियरे डी कुबरटिन थे, ने कभी भी नहीं सोचा होगा कि खिलाड़ी जीतने के लिए अनेक प्रतिबंधित दवाओं / मादक द्रव्यों आदि का प्रयोग करेंगे और ईमानदार खिलाड़ियों के साथ-साथ खेल भावना को भी ठेस पहुंचेगी।

प्राचीन काल में रोम वासी घुड़-दौड़/ घोड़ा-गाड़ी दौड़ / अन्य पशु दौड़ में पशुओं की कृत्रिम रुप से शक्ति बढ़ाने के लिए अनेक पदार्थों/द्रव्यों का इस्तेमाल करते थे

जिससे घोड़ों में शक्ति बढ़ जाती थी, इस प्रक्रम को डोपिंग कहा जाता है ।

शरीर क्रिया विज्ञान (फिजियॉलोजी) की भाषा में प्रत्येक व्यक्ति की कार्य क्षमता / मांसपेशियों के कार्य करने की क्षमता / श्वसन, रक्त प्रवाह आदि की दक्षता पर निर्भर करती है तथा कुछ समय बाद वह थकान (फटीग) अनुभव करने लगता है । थकान की अवस्था में मांसपेशियों का ग्लाईकोजन भंडार समाप्त होने लगता है, रक्त में ग्लुकोज की मात्रा घट जाती है, ग्लुकोज, लैक्टिक एसिड में परिवर्तित होने लगता है (ऑक्सीजन की अपर्याप्त उपलब्धता होने पर) । शरीर में क्षमतानुसार कार्य करने के उपरांत थकान उत्पन्न होने पर रक्त दाब बढ़ जाता है, श्वसनगति तेज हो जाती है, हृदय स्पंदन तेज हो जाता है और पसीना आने लगता है । प्रतिबंधित भैषज्य पदार्थों (फार्माकोलॉजिकल प्रीपेरेशंस) अस्थायी/आंशिक रुप से थकान के लक्षण प्रकट नहीं होने देते तथा थकान के मानसिक लक्षण भी समाप्त प्रायः हो जाते हैं । ये दवाइयां किसी भी प्रकार से "सुरक्षित" नहीं कही जा सकतीं तथा शरीर को अत्यंत क्षति पहुंचाती हैं । अनेक हारमोन तथा फार्मालोजिकल ड्रग्स (जो मुख्यतः निम्न प्रकार हैं) प्रतिबंधित दवाओं के अंतर्गत श्रेणीबद्ध हैं ।

उत्तेजक (इस्टीमुलैंट) : ये पदार्थ मस्तिष्क को उत्तेजित कर कार्यक्षमता को बढ़ाते हैं - जैसे एमफिटामिन, कोकेन, कैफीन, एफिडिन आदि ।

नारकोटिक्स / दर्द निवारण दवा : अत्यधिक मांस पेशियों में खिंचाव के कारण मस्तिष्क को जो दर्द की अनुभूति होती है ये दवाएं उस दर्द की अनुभूति नहीं होने देतीं, जैसे कोडेन, येर्थाडीन, मोरफीन (अफीम से निर्मित), मैथेडीन, डक्सट्रो-प्रो फाक्सीफीन आदि ।

बीटा एड्रीनर : ये दवाएं हृदय पर क्रिया करके चिंता का उन्मूलन करते हुए कार्य क्षमता बढ़ाती हैं, जैसे एसीबुटालोल, लेबेटेलोल, मेटाप्रोलोल आदि ।

एनाबोलिक स्टीराईडस : वृक्क के ऊपर अंतःस्रावी ग्रन्थि सुप्रारीनल (एड्रीनल) ग्रन्थि से (कार्टेक्स भाग से) कोरटी कोस्टीराइड्स / स्टीराड्स नामक हारमोन स्रावित होते हैं । इन हारमोनों के रसायनिक व्युत्पन्न बनाये गये हैं जो मांसपेशियों की ताकत बढ़ाते हैं, जैसे मेस्टरोलोन, मेटानोलोन, क्लोस्टीबोल, टेस्टोस्टीरोन तथा इसके व्युत्पन्न आक्सेन्ड्रोलोन आदि । अनेक कोरटीकोस्टीराइड्स (कोरटीसोन, कोरटीसोल, प्रोडनीसोलोन, डेक्सामीथासोन आदि) दवाएं, हारमोन, थकावट, दर्द, पसीना, सूजन समाप्त करती है तथा सामान्य दशाएं उत्पन्न करती हैं ।

हारमोन : मस्तिष्क में स्थापित मास्टर ग्रन्थि (पिटयूटरी ग्लैन्ड) से ह्यूमैन ग्रोथ हारमोन (सोमेटोट्रापिन) स्रावित होता है जिससे शरीर में परिपक्वता/लंबाई आती है । खिलाड़ी कम उम्र में परिपक्व होने हेतु/शरीर की मजबूती, वृद्धि व ताकत हेतु इस हारमोन तथा इससे व्युत्पन्न दवाओं का सेवन करते हैं । पिटयूटरी ग्रन्थि से स्रावित ए. डी. एच. (एन्टी डाइयूरेटिक हारमोन) शरीर में पानी की मात्रा निर्धारित करता है तथा अधिकांश पानी को शरीर से बाहर उत्सर्जित नहीं करता है । डाइयूरेटिक्स वे दवाएं हैं जिनके सेवन से मूत्र का निर्माण अधिक होकर अधिक उत्सर्जन होता है । खिलाड़ी अपने शरीर का भार कम करने के लिए डाइरेटिक्स दवाएं प्रयोग में लाते हैं जिससे मूत्र का निर्माण अधिक होता है, जल व लवण शरीर के बाहर निकल जाते हैं । अनेक डाइयेरेटिक्स हैं : फ्युरासीमाइड, ट्रायमीटीरोन, क्लोरथालीड़ोन, हाइड्रोक्लोरथापाजाइड आदि ।

इसके अलावा अनेक दवाएं हैं जो हृदय या श्वसन को उत्तेजित करने के काम में आती हैं, अधिक मात्रा में खनिज लवण व विटामिनों का भी सेवन किया जाता है ।

अंतर्राष्ट्रीय खेल स्पर्धाओं में कड़े चिकित्सकीय परीक्षण के बावजूद खिलाड़ियों द्वारा बार-बार मादक द्रव्यों का सेवन किया जाना या प्रयास किया जाना निश्चित रुप से चिंता का विषय है । इससे उनकी सच्ची योग्यता व क्षमता का निर्धारण भी नहीं हो पाता है, और खेल सस्कृंति भी दूषित होती है ।

डॉ. अनिल कुमार शर्मा
पशुचिकित्साधिकारी - प्रभारी
राजकीय पशुचिकित्सालय,
भीमताल, नैनीताल, उ. प्र. - 263136
(लेखक शरीर क्रिया विज्ञान के विशेषज्ञ हैं ।)

3. 'मार्विस' घाव की नाप-जोख करेगा

शरीर के किसी हिस्से में निकलने वाला घाव राई के दाने के बराबर हो या फोड़े की शक्ल का। काफी कष्ट देता है। कई बार तो रात की नींद और दिन का चैन हराम कर देता है और जब घाव ठीक हो जाता है तब भी इस के बारे में सोचने पर सिहरन महसूस होती है। कई बार घाव जल्दी ठीक हो जाता है, तो कई बार काफी परेशानी उठाने के बाद छुटकारा मिलता है। क्यों कि आप तो क्या एक चिकित्सक भी यह नहीं समझ पाता है कि यह घाव किस आकार प्रकार का है ? इसका भीतरी रूपाकार क्या है ? इसकी गहराई कितनी है और यह किस तरह जल्दी ठीक किया जा सकता है ? बहरहाल, आप घाव की टीस और दर्द को सहने के लिए विवश होते हैं। कभी-कभी तो घाव ऐसी जगह निकल आता है कि आपका चलना-फिरना दूभर हो जाता है, चाहे वह घाव देखने में कितना भी छोटा क्यों न हो ?

सच कहें तो अब घाव से परेशान होने के दिन लद गये। क्योंकि वैज्ञानिकों ने एक ऐसा उपकरण तैयार करने की सफलता हासिल की है जो शरीर के किसी अंग में पनपते घाव या फोड़े की सही ढंग से जांच के अलावा उसकी गहराई और चौड़ाई का ठीकठाक पता लगा सकेगा। यह उपकरण है मार्विस यानी कि "मेजरमेंट ऑफ एरिया एंड वॉल्यूम इंस्ट्रूमेंट"।

इस उपकरण की जन्म गाथा भी मात्र आठ साल पुरानी है, जिसकी आवश्यकता दो चिकित्सकों ने बातचीत के क्रम में अनुभव की जो इंग्लैंड के दक्षिण पश्चिम में स्थित "रायल नेशनल हास्पिटल फॉर रूमेटिक डिजीजेज क्लिनिक मेजरमेंटस लेबोरेटरी" में कार्य कर रहे थे, जिसे डॉ. ब्रियन जोंस ने काम करना शुरू किया। उल्लेखनीय है कि इससे पहले भी डॉ. जोंस और डॉ. फ्रांसिस रिंग मिल जुलकर अभिचित्रण के क्षेत्र में प्रयास कर चुके थे। डॉ. जोंस के कई विद्यार्थी पहले से ही दर्द पैदा करने वाले कई प्रकार के विकारों की नापजोख में जुटे थे। इन में हांगकांग से आया हुआ वह विद्यार्थी भी शामिल था जिसने स्पोंडेलाइटिस से पीड़ित रोगियों की रीढ़ का मुड़ाव मापने की प्रणाली की खोज में कामयाबी हासिल की थी।

मार्विस के आविष्कार में लगे दोनों चिकित्सकों का कहना है कि कई ऐसे फोड़े होते हैं जिनके भरने में काफी समय लगता है, क्योंकि ये घाव बहुत धीरे-धीरे भरते हैं, जिनके ठीक होने में सप्ताह ही नहीं बल्कि महीनों समय लगता है। इसलिए, चिकित्सकों को यह जानना आवश्यक होता है कि घाव का जिस प्रकार उपचार किया जा रहा है उससे घाव पर कोई प्रभाव पड़ रहा है या नहीं ? ताकि समय से ठीक-ठाक उपचार संभव हो सके। अत: यदि ऐसा कोई उपकरण बन जाता, जो किसी घाव या फोड़े का आकार माप सकता तो उपचार में काफी सुविधा होती। बहराल, अब मार्विस के द्वारा उन समस्त संक्रमणों की पूर्व चेतावनी दी जा सकती है, जो बाद में चलकर गंभीर रूप धारण कर सकते हैं।

मार्विस की कार्यप्रणाली ऐसी है कि इसके प्रयोग से रोगी को किसी प्रकार की हानि या कष्ट नहीं होता। कारण इस यंत्र द्वारा प्रकाश की एक शक्तिशाली बीम 35 मिलीमीटर की स्लाइड से प्रक्षेपित की जाती है, जिससे रंगीन समानांतर धारियां बनती हैं। "संरचित प्रकाश" के साथ समानांतर धारियां जब किसी वस्तु पर केंद्रित की जाती हैं तो उस वस्तु के आकार-प्रकार के हिसाब से धारियों में विकृति प्रकट होती है अर्थात वे आड़ी तिरछी हो जाती हैं। इन विकृत धारियों को नाप कर, उस वस्तु या घाव क्षेत्र का आकार-प्रकार का सही तौर पर पता लगाया जा सकता है। इसमें रोगी को किसी प्रकार का कष्ट सहन करने की आवश्यकता होती है और न ही इन्जेक्शन की। जबकि घाव की सुरक्षित, सही, जानकारी मिल जाती है।

किंतु वैज्ञानिक अनुसंधान में सदैव ही ऐसा होता है कि आरंभ में जो चीज काफी सीधी-सपाट दिखाई देती है, वही सूक्ष्मता से देखने-भालने पर बड़ी जटिलता का बोध कराती है यानी कि जो चीज पहले काफी सहज और सरल लगती है, वैसी होती नहीं है। फलत: चिकित्सकों को ऐसी कठिनाइयों का सामना भी करना पड़ा क्योंकि कंप्यूटर या रोबोट की दृष्टि से गुजरने वाली वस्तुएं सपाट सतह वाली थीं, लेकिन लोग और विशेषरूप से उनके घाव और फोड़े भला इतने सीधे क्यों होने लगे, दूसरी समस्या यह सामने

आयी कि मनुष्य की त्वचा प्रकाश किरणों की उतनी सटीक परावर्तक नहीं साबित हो सकी। नतीजतन कई बार उस अंग पर फेंकी गयी धारीदार प्रकाश की किरणें लुप्त हो जाती थीं।

इस समस्या से निंबटने में चिकित्सकों को पूरे तीन साल लग गये। जिसका समाधान इस प्रकार निकला कि किसी चीज की दो तस्वीरें उतारी जायें। एक तो पूरी सफेद प्रकाश में, दूसरी अगल-बगल बनी नीली और लाल धारी वाली रोशनी में। पहली तस्वीर से ज्ञात हुआ कि यदि त्वचा में कोई घाव या फोड़ा पनप रहा है तो वह रोशनी किस सीमा तक परावर्तित करता है। दूसरी तस्वीर से रंगीन धारियों के आड़े-तिरछेपन के हिसाब से घाव की नाप-जोख का आकलन करने में सहायता मिली। जिसे वीडियो कैमरे में भरकर कंप्यूटर में डाला गया। सही मायने में माविस प्रणाली की कुंजी वह साफ्टवैयर है, जो चित्रों या विश्लेषण करके घाव का घेरा नापता है, अभी कंप्यूटर माउस की सहायता से यह कार्य करना पड़ता है, लेकिन प्रयास किया जा रहा है कि इस पूरी प्रक्रिया को स्वचालित ढ़ंग से संपन्न किया जा सके।

अस्पतालों में बुजुर्गों, एड्स के रोगियों और कुछ औषधियों के हानिकारक प्रभावों से ग्रसित व्यक्तियों पर "माविस" को आजमाया गया तो यह रहस्य उदघाटित हुआ कि 8 प्रतिशत रोगियों में घाव या फोड़ा बन रहा था। विशेषरुप से उन रोगियों में यह शिकायत अधिक पायी गयी जिनकी प्रतिरक्षा प्रणाली सही ढंग से नहीं कार्य कर रही थी।

घाव या फोड़े निकलने की समस्या विश्वव्यापी है। अत: माविस की उपयोगिता को नकारा नहीं जा सकता। इसके अभूतपूर्ण सहयोग से ही घावों के बारे में नित नये तथ्य उजागर हो रहे हैं। जैसे कि घाव भरते कैसे हैं ? वास्तव में घाव तल की ओर से भरना आरंभ करते हैं या फिर अगल-बगल से ? इसका अर्थ यह हुआ कि घाव का क्षेत्रफल घटने से पहले ही उसका आयतन कम हो जाता है।

रंगीन कैमरे के प्रयोग से घाव के रंगों में होने वाले बदलाव से भी चिकित्सक घाव के हावभाव का पता लगा सकते हैं। क्योंकि कैमरा चिकित्सक की आंखों से कहीं अधिक संवेदनशील होता है।

एक रोचक तथ्य यह है कि यह तकनीक घाव, चोट और जलने-कटने के उपचार के अतिरिक्त प्लास्टिक सर्जरी जैसे उन उपचारों में काम आ सकती है जहां आकृतियों की सही जानकारी आवश्यक होती है, घावों के बारे में सही जांच और नाप का कार्य माविस ही करेगा।

घाव के मापने का प्रयास पहले भी हुआ है। जैसा कि एक पारंपरिक तरीके के अनुसार घाव के स्थान पर चिपकने वाली एक फिल्म रख दी जाती है और फेल्ट टिप वाले पेन से उस घाव का आकार-प्रकार ज्ञात कर लिया जाता है। इस फिल्म को हटाकर ग्राफ पेपर पर रख दिया जाता है और उन घेरों की गणना करके घाव का आयतन माप लिया जाता है। किंतु इस तरह गलती होने की काफी संभावना होती है। घाव का आयतन निकालने के लिए लंबाई, चौड़ाई, गहराई जानने के लिए घाव के भीतर "सेलाइन सोल्यूशन" भरा जाता है। जिसे कई बार घाव सोख लेता है। इसलिए, यहां भी गलती होने की संभावना प्रबल होती है। इसी कारण चिकित्सक ऐसा कुछ तरीका अपनाना चाहते थे जिससे रोगी को छुये बिना उस के घाव का आयतन ज्ञात किया जा सके। ताकि घाव में संक्रमण छोड़ने का कोई जोखिम भी शेष नहीं रहे और रोगी को कोई कष्ट भी सहन नहीं करना पड़े।

इसके लिए जिस तकनीक की खोज की गयी वह माविस है जिसका विदेशों में चिकित्सा के क्षेत्र में उपयोग काफी बढ़ा है, जिसकी मांग को देखते हुए ब्रिटेन में एक निजी कंपनी को निर्माण अधिकार सौंप दिये गये हैं।

तारिक असलम तस्नीम
लेखनी प्रकाशन,
2/6 हारुन नगर कालोनी,
फुलवारी शरीफ, पटना-801 505

4. हींग - वातनाशक घरेलू औषधि

"भावप्रकाश" ग्रंथ में हींग को कृमिघ्न (कृमि नाशक) तथा 'चरक संहिता' में रत्नाकर कहा गया है। यूनानी, आयुर्वेदिक एवं होम्योपैथी सभी में हींग को वातनाशक माना गया है।

हींग का वैज्ञानिक नाम "फेरूला ऐसाफोइटिडा" है। इसका असली रूप इसका दूध है। झाड़दार पौधे की जड़ सुखाकर थोड़ा ऊपर तने के पास से, पौधा काट देते हैं। उसमें से गाढ़ा रस निकलता है। उस हिस्से को बर्तन से ढाँप देते हैं ताकि धूल-मिट्टी न लगे। कुछ दिन बाद रस खुरच लेते हैं। इस प्रकार तीन माह तक थोड़े-थोड़े फासले से तना काटते रहते हैं तथा गोंद के रूप में रस उतारते रहते हैं। आमतौर पर एक पौधे से 250 से 300 ग्राम हींग मिल जाती है। काबुली या खुरासानी हींग उत्तम मानी गयी है। यह अफगानिस्तान से आती है। पंजाब और कश्मीर की देशी हींग उच्च कोटि की नहीं होती है।

हींग की पहचान

1. हींग को पानी में डालने परसंपूर्ण हींग घुल जाती है व पानी की रंगत दूधिया हो जाती है। दूसरे पात्र में डालने पर यदि तलछट रेत मिट्टी है तो हींग मिलावटी है अन्यथा शुद्ध है।
2. दियासलाई से जलाने पर पूर्ण रूप से हींग जल जाये तो असली है, अन्यथा अशुद्ध है।
3. शुद्ध हींग सामान्यतः दानेदार होती है। ढेले या रॉल के रूप में नकली होती है।

हींग के उपयोग

अतिसार में :- अत्यधिक दस्त लगना, हैजा या अतिसार का संकेत है। इसमें हींग, जायफल, काली मिर्च व केसर 5-5 ग्राम लैकर गो दूध में पीसकर छोटी-छोटी गोलियां बना लें तथा मौसम के अनुसार ठंडे या गर्म पानी, चावलों की मांड या मट्ठे के साथ 3-3 घंटे बाद 1-1 गोली लें, आराम मिलेगा। "निघण्टु रत्नाकर" में इसी इसे मल स्तंभक माना गया है।

अपच :- हाजमा बिगड़ने पर काली मिर्च (5 ग्राम), इलायची (5 ग्राम), भुना हुआ सुहागा (5 ग्राम), नींबू का सत (10 ग्राम), सेंधा नमक (15 ग्राम) को मिलाकर पीस लें। अब एक ग्राम पीपरमेंट डालकर शीशी में ढक्कन लगाकर रख लें। इसे चूर्ण के रूप में लें। इससे अपच दूर होता है।

उल्टी होने पर :- हींग को घी में भून लें व अजवाइन, काला नमक व काली मिर्च मिलाकर पीस लें। अब इस चूर्ण की 2 ग्राम मात्रा पानी के साथ लें।

औरतों के कमर दर्द में :- 3 ग्राम हींग, दस ग्राम काली मिर्च, 10 ग्राम सौंठ व पीपल को पीसकर छान लें। अब 50 ग्राम काले तिल भूनकर, 10 ग्राम ब्राह्मी बूटी के साथ काढा बना लें। यह 3-5 ग्राम रोज लें। कमर दर्द में आराम पहुंचेगा।

नेत्र रोगों में : नेत्र पर गर्मी, खुशकी, थकान होने पर गाय का 250 ग्राम घी व ताजा 250 ग्राम गौ मूत्र लेकर, 3-3 ग्राम हींग, हल्दी, सहजन के बीज, गंधक व दस दाने काली मिर्च डालकर खरल कर लें। अब इसका परांठा बना लें व इसको काला पड़ने तक तलें। अब घी को निथार लें। इसे नाक के नथुनों में डालें एवं क्रीम की तरह कनपट्टी पर मलें। एक सप्ताह में नेत्र रोग दूर होते हैं।

इसी प्रकार कान दर्द, कूकर खाँसी व खट्टी डकारों में भी उपयोगी है। इसका सेवन सोच समझकर ही करना चाहिए क्योंकि हींग एक तरफ शरीर में आकर्षण लाती है परंतु दूसरी ओर शरीर में गर्मी करती है। इसका सेवन लंबे समय तक नहीं करना चाहिए।

एन. के. बौहरा

प्लाट नं. 389, गली नं 10,
मिल्कमैन कॉलोनी, पाल रोड,
जोधपुर

5. नेत्रदान - एक राष्ट्रीय आवश्यकता

भारत में करीब 1.25 करोड़ लोग दृष्टिहीन हैं जिसमें से करीब 30 लाख व्यक्ति नेत्रदान द्वारा दृष्टि पा सकते हैं। सारे दृष्टिहीन नेत्रदान द्वारा दृष्टि नहीं पा सकते क्योंकि इसके लिए पुतलियों के अलावा नेत्र संबंधित तंतुओं का स्वस्थ होना जरूरी है। पुतलियाँ तभी किसी दृष्टिहीन को लगायी जा सकती हैं जबकि कोई इन्हें दान में दे और यह नेत्रदान सिर्फ मृत्यु के बाद ही किया जा सकता है। जीवित व्यक्ति तभी नेत्रदान कर सकता है जबकि उसकी दृष्टि किसी कारण से चली गयी हो और पुतलियाँ सुरक्षित हों।

देश की इतनी अधिक जनसंख्या को देखते हुए 30 लाख नेत्रदान हो पाना आसान लगता हो परंतु ऐसा नहीं है। तथ्य कुछ और हैं, आइए इन्हें जानें -

प्रतिवर्ष 75 लाख मृतकों में सिर्फ 5-7 हजार ही नेत्रदान हो पाते हैं। क्या यह शोचनीय नहीं है ? इससे अधिक दुर्भाग्यपूर्ण तथ्य यह है कि 50 प्रतिशत नेत्रदान पड़ोसी देशों से आता है। एक छोटा सा देश, श्रीलंका न सिर्फ हमें बल्कि 45 अन्य देशों को भी दान में मिले नेत्र प्रदान करता है।

क्या यह हम करोड़ों भारतीयों के लिए शर्म की बात नहीं है ? जबकि हम हर क्षेत्र में स्वावलंबन प्राप्त करने का प्रयास कर रहे हैं तब क्यों न नेत्रदान के क्षेत्र में भी हम स्वावलंबन प्राप्त करें। कॉर्नियल (corneal) प्रतिरोपण के माध्यम से कॉर्नियल ब्लाइंड व्यक्ति को दृष्टि दे पाना पिछले 40-50 वर्षों से वैज्ञानिक तकनीकी द्वारा संभव होने के बावजूद हम उसके उपयोग में पीछे क्यों हैं? आइए, हम न सिर्फ नेत्रदान करें बल्कि उसका प्रचार भी करें और दूसरों को भी नेत्रदान के लिए प्रेरित करें।

नेत्रदान बहुत आसान है। 'रक्तदान' से भी आसान। नेत्रदान से जुड़े कुछ तथ्य इस प्रकार हैं :

1. नेत्रदान के लिए उम्र एवं धर्म का कोई बंधन नहीं है। 80 वर्ष की आयु तक नेत्रदान संभव है।
2. चश्मा पहनने वाला, जिसकी आंखों का ऑपरेशन हो चुका हो या जिसे खुद नेत्र दान में मिला हो, नेत्रदान कर सकता है।
3. केवल वही व्यक्ति जो एड्स से पीड़ित हो, जिसे ब्लड कैंसर हो, या यौन रोगों से पीड़ित हो या पीलिया या पुतलियों संबंधी रोगों से पीड़ित हो नेत्रदान नहीं कर सकता। परंतु इन सबका फैसला नेत्र विषेशज्ञ द्वारा ही लिया जाना चाहिए क्योंकि ऐसे नेत्र अनुसंधान के काम आ सकते हैं।
4. किसी दुर्घटना में यदि पुतलियां ठीक हों तो पुतलियों का दान किया जा सकता है।
5. नेत्रदान मृत्यु के तीन या चार घंटे के अंदर होना चाहिए। (असाधारण परिस्थिति में 6 घंटे तक)। नेत्रदान में समय सीमा का बहुत महत्व है अत: नेत्रदान की इच्छा अपनी वसीयत में न लिखें क्योंकि वसीयत अकसर मृत्यु के कई दिनों या महिनों बाद खोली जाती है।
6. नेत्रदान की इच्छा व्यक्त करने का बेहतर तरीका है अपने घर के करीब के नेत्र अस्पताल का शपथ पत्र/ रिश्तेदार एवं मित्र, जिन्होंने आपके शपथ पत्र पर साक्षी के रूप में हस्ताक्षर किये हों, आपकी भावना समझ सकते हैं। इसके लिए आप अपने रिश्तेदारों, मित्रों एवं आस-पड़ोसियों से अपनी इच्छा की चर्चा कर सकते हैं। इससे आपकी इच्छा पूरी होने की संभावना बढ़ जाती है एवं सामाजिक जागरूकता भी आती है।
7. शपथ पत्र भरने के बाद आपको एक कार्ड दिया जायेगा जिसमें आपका रजिस्ट्रेशन नंबर अंकित होगा। इस कार्ड को आप सदा अपने साथ रखें। यात्रा के समय भी।
8. नेत्र बैकों का टेलीफोन नं. अपने घर एवं ऑफिस में रखें।
9. मृत्यु के तुरंत बाद नेत्र-बैंक को सूचित करना अत्यावश्यक है। इसे कोई भी, रिश्तेदार, मित्र या पड़ोसी सूचित कर सकते हैं एवं इसके लिए उसी नेत्र-बैंक को ही सूचित करना जरूरी नहीं है। समय की आवश्यकता के कारण सबसे करीबी नेत्र-बैंक को सूचित करें।

10. नेत्रदान के लिए यह जरूरी नहीं है कि मृतक ने ही कोई इच्छा की हो या शपथ पत्र दिया हो। संबंधियों की इच्छा पर भी नेत्रदान किया जा सकता है।

इस संदर्भ में उन लोगों से यह एक अपील है जो नेत्रदान के महत्व को समझते हों कि इन उर्पयुक्त बातों को याद रखें। नेत्रदान के लिए सभी को प्रेरित करें।

अत्यावयक - नेत्र बैंक को सूचित करने के बाद कृपया निम्न बातों का ध्यान रखें:-

क) मृत्यु का प्रमाण पत्र तैयार रखें।

ख) मृतक की पलकों को बंद कर दें एवं उनके ऊपर भीगी रूई रख दें।

ग) कमरे में पंखे बंद कर दें। यदि एअर कंडीशनर हो तो उसे चालू रखें।

घ) मृतक का सिर करीब 6 इंच ऊपर कर तकिये के ऊपर रखें।

च) सूचना मिलते ही नेत्र विशेषक मृतक के नेत्र ले जायेंगे और इस प्रक्रिया में मात्र 20 मिनट लगते हैं। इसके बाद आखों में रूई रखकर पुतली को ठीक से बंद कर देते हैं। अत: मृतक का चेहरा विकृत नहीं होता है।

छ) नेत्रों को शरीर से निकाल कर उन्हें एक विशेष बर्तन (फ्लास्क) में रखकर दो भिन्न लोगों को प्राथमिकता के अनुसार उन्हें लगाया जायेगा।

ध्यान रहे इन नेत्रों लिए किसी प्रकार का शुल्क नहीं लिया जायेगा। दान में दिये गये नेत्र कभी भी बेचे या खरीदे नहीं जाते। ये नेत्र दो नेत्रहीन व्यक्तियों को ज्योति प्रदान कर सकते जोकि न सिर्फ उनका जीवन बदल देगा परंतु उनके जीवन को हमेशा के लिए अंधेरे के अभिशाप से बाहर निकाल देगा।

यह सब हम कर सकते हैं। जिस काम को हम शायद जीवित अवस्था में कर न सकें, उसे मृत्यु के पश्चात् कर सकते हैं। नेत्रदान से हम सामाजिक ऋण चुका सकते हैं। आपसे निवेदन है कि आप नेत्रदान के लिए आगे आयें, आज यह हमारी राष्ट्रीय आवश्यकता बन गयी है।

इस पत्र को पढ़कर यदि आप नेत्रदान करने के लिए शपथ पत्र पर हस्ताक्षर करने को उत्सुक हों या आपको किसी प्रकार का संदेह हो या किसी प्रकार की सहायता करना चाहते हों या आपके पास कोई सुझाव हो तो विस्तृत चर्चा के लिए एवं प्रदर्शनी के लिए निम्न पते पर संपर्क करें। नेत्रदान के प्रचार के लिए इस संदेश का अधिक से अधिक प्रचार करें।

श्री. वि. आगशे
वर्षा, A/39 न्यू मंडाला, देवनार,
मुंबई - 400 088, फोन 557 2785
तथा
विकिरण धातुकी प्रभाग,
भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र, मुंबई 400 085
(फोन : 556 3060 Extn : 3525/2242)

6. स्वास्थ्य में तंत्रिका जाल का उपयोग

गत वर्षों में, तंत्रिका जाल (neural network) ने अनुसंधानकर्ताओं एवं आम लोगों दोनों का ही बहुत अधिक ध्यान आकर्षित किया है। तंत्रिका जाल ने कई सारे चिकित्सा एवं स्वास्थ्य संबंधित उन क्षेत्रों में शक्तिशाली समाधान दिये हैं जहां पर परंपरागत विधियों के जरिए अच्छे परिणाम नहीं मिल पाते हैं।

सर्व प्रथम तंत्रिका जाल का विचार मानव मस्तिष्क के जीव-दैहिकी को मॉडल करने के प्रयास से आया। इसका उद्देश्य उन तकनीकी प्रणालियों को बनाना था जो चिंतनशील (cognitive) अनिश्चिताओं तथा उसके सजात पर केंद्रित हों। अत: तंत्रिका जाल के मूलभूत सिद्धांत परंपरागत संगणक के संचालन से भिन्न होते हैं। इसमें सीमित या परिभ्रंशित जानकारी से अनुकूलतम समाधान के नजदीक समाधान को पाने की सामर्थ्य है। इस पर आधारित प्रणाली मानवीय तर्क के कठिन गुणों को परिपूर्णता, सही तर्क तथा परंपरागत संगणक की स्मृति (मेमोरी) के साथ संयोजित करते हैं।

अत: यह प्रणाली चिकित्सा तथा स्वास्थ्य देखभाल के लिए सर्वाधिक उपयुक्त है। ऐसा इसीलिए है क्योंकि साधारणत: निर्णय आत्मनिष्ठ, लगभग कच्चे (raw) तथा अधूरे ज्ञान पर आधारित होता है, जो कि सोच विचार की अनिश्चिताओं के साथ जुड़ा होता है। तंत्रिका जाल में अनेक तंत्रिकाएं एक दूसरे से जुड़ी होती। चित्र में एक

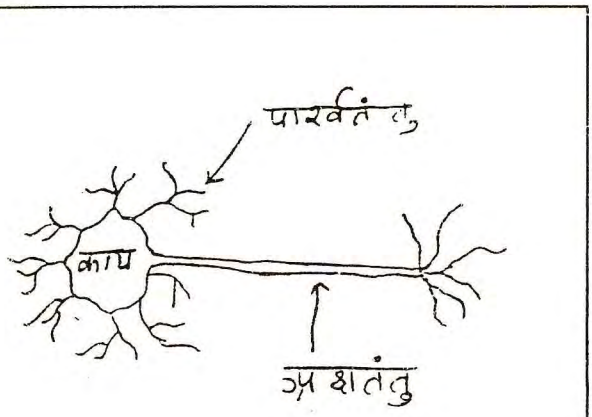

चित्र : एक तंत्रिका

तंत्रिका को दर्शाया गया है। इसके तीन भाग हैं - काय (soma), पार्श्वतंतु (dendrite), एवं प्रक्षतंतु (axom)। एक तंत्रिका दूसरे तंत्रिकाओं से अंतर्ग्रथन (synapse) के माध्यम से संकेत प्राप्त करती है। संकेतों का समूह यह निश्चित करता है कि क्या वह तंत्रिका सक्रिय होगी। सक्रिय तंत्रिका दूसरे तंत्रिकाओं को संकेत प्रेषित करती है। इस प्रकार तंत्रिका जाल में एक भाग से दूसरे भाग में संकेत पहुंच जाते हैं।

तंत्रिका जाल या तो संभरण या प्रतिसंभरण प्रकार के होते हैं। संभरण जाल में एडालाइन, परसपट्रोन, मैडालाइन, बैक प्रोपेगेशन जैसे प्रतिरूपों का उपयोग होता है जबकि प्रतिसंभरण जाल में ग्रासबर्ग अधिगम, हब्बीयन अधिगम, कोबोनन तथा होपफील्ड जैसे प्रतिरूपों का।

तंत्रिका जाल का चिकित्सा में कैंसर सेल के वर्गीकरण, ई. सी. जी. और ई. ई. जी. विश्लेषण, नाभिकीय चिकित्सा प्रतिबिंब पर आधारित कैंसर के लिए अनुकूलतम निदान-चिकित्सा विधि का निर्धारण, पेशीविद्युत संकेतकों का वर्गीकरण और बहुत सारी बीमारियों के निदान जैसे संधिशोथ, हृदय-विराम एवं मनोविकार वाले मरीजों के वर्गीकरण आदि में प्रयोग होता है। यह अस्पताल में मरीजों के ठहरने की अवधि की पूर्व सूचना देने में भी प्रयुक्त होता है, जिससे कि गुणवत्ता में सुधार और चिकित्सा प्रणाली की लागत को कम किया जा सकता है। इस उपचार की योजना, जैसे चिकित्सा पुस्तकों, औषध व्याप्त करने में भी सहायता करती है। ये अस्पताल आपतकालीन कमरों में भी उपयोगी होते हैं। इससे एक नर्स कई सारे निदानों को शीघ्रता तथा दक्षता से कर सकती है। चिकित्सा कॉलेजों में ये सर्वोत्तम प्रशिक्षण देने में सहायता करते हैं।

समाज के लोगों में मुकदमेबाजी की तरफ ध्यान बढ़ने से भविष्य में अनाचार युक्त मुकदमों में बढ़ोत्तरी की संभावना बनेगी। यह डॉक्टरों की जरूरत से ज्यादा निदानों तथा अधिक उपचारों को सुरक्षात्मक तरीके से करने के लिए बाध्य करेगा, जिससे लागत बढ़ेगी और दक्षता घटेगी। इस स्थिति में फिजिशियन तंत्रिका जाल प्रणाली को अपना सकते हैं, जो कि उनके इलाज के मानकों तथा दक्षता को बढ़ा सकता है। फलस्वरूप, भूल (oversight) और मुकदमे के भय से होने वाला नुकसान घटेगा। आजकल अस्पतालों में समय-समय पर समीक्षा करने का प्रचलन चल पड़ा है इसीलिए मानकीकरण आवश्यक हो गया है। इस कार्य को आसान करने के लिए विभिन्न कंपनियां चिकित्सा उपकरणों का एकीकरण कर रही हैं।

चिकित्सा ज्ञान में बढ़ोत्तरी तथा नयी निदान और चिकित्सीय पद्धतियों में जो विकास हुए हैं उनको जारी रखने में तंत्रिका जाल महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है। इसकी मदद से डॉक्टरों को आधुनिकतम निदान एवं चिकित्सीय ज्ञान आसानी से उपलब्ध हो सकेगा।

भविष्य में तंत्रिका जाल मरीजों को टेलीफोन चिकित्सा सुविधा देने में मदद करेगा और उनको सर्वाधिक उपयुक्त चिकित्सा सुविधाओं को बतायेगा, जिससे कि चिकित्सा संसाधनों का सही उपयोग हो सकेगा। तंत्रिका जाल, घरेलू निदान सॉफ्टवेयर का भी विस्तारण करेगा। इससे उपभोक्ता को अधिक चिकित्सा ज्ञान मिलेगा तथा चिकित्सा देखभाल अधिक दक्षता से होगी।

तंत्रिका जाल फलानुमान और उपचार के लिए प्रयोग में लाया जा सकता है। इससे किसी मधुमेह के मरीज के रक्त ग्लूकोज के परीक्षण के दौरान ही उपयुक्त इन्सुलिन

ट्रप्सन मात्रा को निर्धारित करना संभव होता है। यह मधुमेह की पूर्व सूचना देने में और यह बताने में कि सिर पर चोट लगने के 6 महीने बाद मरीज की क्या स्थिति होगी, सक्षम है।

इस प्रणाली ने चिकित्सा एवं स्वास्थ्य देखभाल के कई सारे क्षेत्रों में प्रभावोत्पादक परिणाम दिखाये हैं। ये विभिन्न चिकित्सा तथा स्वास्थ्य संबंधी देखभाल की समस्याओं के लिए मुख्य उपकरण की तरह प्रयोग होंगे। यह संसाधनों के अनुकूलतम प्रयोग के साथ-साथ निश्चित निदान के नजदीक आने में सहायता देंगे। फलस्वरूप समाज में इसका बहुत अधिक प्रभाव पड़ेगा।

फिर भी तंत्रिका जाल सभी समस्याओं का हल नहीं है। इसकी सबसे बड़ी कमी इसमें व्याख्यात्मक (explanatory) सुविधा का नहीं होना है। भविष्य में तंत्रिका जाल का विकास जननिक अभियांत्रिकी तथा मनुष्य के प्राकृतिक संवंदी अंगों (आंख, कान, नाक, त्वचा इत्यादि) द्वारा संपन्न होने वाले कार्य जैसे देखना, सुनना, सूंघना, स्पर्श करना इत्यादि का मस्तिष्क के अनुरूप संसाधन (प्रोसेसिंग) कर पाने की दिशा में होने की संभावना है।

विनोद कुमार मदान,
इलेक्ट्रॉनिकी प्रभाग,
भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र, मुंबई - 400 085
एवं
बृजेश तिवारी,
कंप्यूटर विज्ञान एवं इलेक्ट्रॉनिकी विभाग,
वनस्पथली विद्यापीठ, राजस्थान 304 022

❐❐❐

गुजरात अल्कलीज एंड केमिकल लि. द्वारा लखीगाम के तटीय पानी में अपशिष्ट के मोचन का समुद्री पर्यावरण पर प्रभाव

(पृष्ठ 34 का शेष भाग)

पेट्रोलियम हाइड्रोकार्बन :- तटीय तथा खाड़ीय पानी में पेट्रोलियम हाइड्रोकार्बन की मात्रा 3 और 26 माइक्रोग्राम/लीटर पायी गयी जो कि अप्रदूषित पानी में पायी जाने वाली मात्रा के बराबर है और भविष्य में मूल्यांकन के लिए आधाररूप माना जायेगा।

भारी धातु :- सूक्ष्म मात्रिक धातुओं की सांद्रता तटीय क्षेत्र की मिट्टी में अति अल्प मात्रा में पायी गयी और यह सांद्रता भविष्य में मूल्यांकन के लिए आधार रूप मानी जायेगी।

निष्कर्ष :- उपरोक्त विवरण से पता चलता है कि 6000 मी^{3}/दिन के हिसाब से परिशोधित अपशिष्ट को 2.5 मी/सेकंड की गति से उपयुक्त प्रसारक के माध्यम से मोचन करने से व्यर्थ पानी में प्रयुक्त अवयवों का बिखराव अति शीघ्र हो जायेगा और इसका प्रभाव तटीय पर्यावरण पर नहीं होगा। यहां तक कि खराब परिस्थितियों में जब कि प्रदूषकों का बहाव किनारे की तरफ होगा, किनारे के पानी का गुणधर्म प्रभावित नहीं होगा क्योंकि व्यर्थ के मोचन का स्थान निर्धारण भाटा की सतह से 500 मीटर दूर किया गया है। दूसरी औद्योगिक इकाइयों के अपशिष्ट के मोचन की जगह का निर्धारण इस ढंग से किया गया है कि पृष्ठ भूमि में उपलब्ध अवयवों की मात्रा 50-100 मीटर की दूरी पर प्राप्त हो जायेगी। अतः संलग्न मोचनों के विरोधात्मक प्रदूषकों का निर्माण नहीं हो पायेगा।

आभार

लेखकगण राष्ट्रीय समुद्र-विज्ञान संस्थान, क्षेत्रीय केंद्र मुंबई के वैज्ञानिक प्रभारी डॉ. महेश द. झिंगडे तथा राष्ट्रीय समुद्र विज्ञान संस्थान, गोवा के निदेशक, डॉ. ई. डेसा द्वारा इस शोधकार्य को बढ़ावा देने के लिए विशेष रूप से उनके आभारी हैं।

❐❐❐

वैज्ञानिक-परिचय

माइकल फैराडे

कृषिचयन,
एम. एससी. प्रथम वर्ष (भौतिक विज्ञान)
द्वारा डॉ. चतुर्भुज साहु,
रीडर एवं अध्यक्ष, मानव विज्ञान विभाग, गिरिडीह कॉलेज,
गिरीडीह - 815 301 (बिहार)

भौतिक विज्ञान के क्षेत्र में माइकल फैराडे का अपना एक विशिष्ट स्थान है। उनके प्रायोगिक अन्वेषणों ने मानव की सबसे अधिक भलाई की है। आज का अति विकसित विद्युत-अभियंत्रण क्षेत्र माइकल फैराडे द्वारा आविष्कृत विद्युत-चुंबकीय क्षेत्र का ही विकसित रूप है। इनके अनुसंधानों - जो भावी पीढ़ी को विरासत के रूप में मिले हैं - की एक लंबी तालिका है, जिससे इनके कामों की संख्या का 16,041 होना पाया जाता है। मनुष्य के इस अल्प जीवन में इतना काम कैसे संभव है - इसकी कल्पना नहीं की जा सकती। अपने जीवन के निम्न स्तर से ये विज्ञान के उच्चतम स्तर पर केवल अपने गुणों और धैर्य से पहुंच सके। यह एक ऐसा इतिहास है, जिसे पढ़कर न जाने कितनी भावी संतानें अपनी मंजिल को प्राप्त कर रही हैं।

माइकल फैराडे का जन्म 1791 में एक लुहार के घर हुआ था। इन्होंने अपनी जीविका एक जिल्दसाज के यहां लंदन में प्रारंभ की। इनके पिता लंदन से यॉर्कशायर चले गये थे। यहां रसायन शास्त्र और विद्युत-विज्ञान की जो किताबें इनके हाथ आयीं उनसे वे इन विषयों की ओर आकर्षित हुए। इसी दुकान के एक ऐसे ग्राहक के अनुग्रह से, जो 'रॉयल इन्स्टीट्यूशन' का सदस्य था, इन्हें उन अभिभाषणों में जाने के लिए प्रवेश-पत्र मिला, जिन्हें उस समय के विख्यात रसायनवेत्ता सर हम्फ्रे डेवी रॉयल इन्स्टीट्यूशन में देने वाले थे। इन्होंने उस समय डेवी साहब के अभिभाषणों के अवधेय लिख लिये। बाद में आलोक -पुस्तिका में स्वच्छ चित्रों सहित उनका निदर्शन करते हुए उन्हें फिर से लिख डाला और उसे डेवी साहब के पास यह प्रार्थना लिखकर भेज दिया कि उन्हें प्रयोगशाला में कोई भी काम दिया जाय। इससे डेवी साहब का हृदय पसीज उठा और उन्होंने इन्स्टीट्यूशन के गवर्नर (नियंत्रक) से सलाह ली कि इस लड़के के लिए क्या कुछ किया जा सकता है। "उसे बोतल धोने दो," गवर्नर ने कहा, "अगर वह वाकई अच्छा है तो इसे मंजूर करेगा और अगर वह इन्कार कर दे तो समझ लो बेकार है।" इस तरह डेवी साहब की सहायता से फैराडे 1813 में एक सहायक की हैसियत से रॉयल इन्स्टीट्यूशन में आये। कौन जानता था कि यही आगे जाकर डेवी का उत्तराधिकारी हो जायेगा। माइकल फैराडे के संदर्भ में डेवी ने एक बार कहा था कि उनकी सबसे बड़ी खोज 'माइकल फैराडे' ही थी।

'रॉयल इन्स्टीट्यूशन' में डेवी के साथ फैराडे का पहला महत्वपूर्ण कार्य क्लोरीन, कार्बोनिक एसिड, अमोनिया आदि गैसों का द्रवीकरण था। इनका दूसरा महत्वपूर्ण कार्य, जो इन्होंने स्वयं किया, चुंबकों का धाराओं के इर्द-गिर्द तथा धारावाही चालकों का ध्रुवों के इर्द-गिर्द घूमना था, भावी अन्वेषणों के लिए पहली सीड़ियां साबित हुईं।

1831 के दौरान इन्होंने विद्युतचुंबकीय उत्पादन का अनुसंधान किया। यह एक ऐसा सिद्धांत था, जिससे बड़े पैमाने पर बिजली पैदा करने की संभावनाओं के द्वार खुल गये और जो आजकल सभी व्यवहारिक संस्थाएं सर्वत्र काम में ला रही हैं। विद्युत की आवश्यकता और उपयोगिता को देखते हुए। तथा यह ख्याल करते हुए कि इससे मानव जीवन की समृद्धि हर दृष्टिकोण से बढ़ गयी है, इसमें कोई शक नहीं है कि एक ऐसा अनुसंधान किसी भी मनुष्य को

अमर बना देने के लिए काफी है। चुंबकीय तथा विद्युतीय बल रेखाओं की कल्पना के लिए जिन्हें पहले-पहल इन्होंने ही जन्म दिया। हम इनके आभारी हैं।

माइकल फैराडे की अगली महत्वपूर्ण खोज विद्युत-धाराओं का रासायनिक प्रभाव है, जिसके दूरगामी परिणाम प्राप्त हुए। प्रकाश-ध्रुवण-तल के चुंबकीय परिभ्रमण की खोज का श्रेय भी इन्हीं को है। निम्न दबाब पर गैस में से विद्युत विसर्जन के संबंध में, विसर्जन नली का प्रकाशहीन स्थान इनकी याद में 'फैराडे का अंधाकरमय स्थान' कहलाता है। पारधुतिक पर इनके कार्य एवं इनके सम्मान में ग्राहिता की व्यवहारिक इकाई फैराडे कहलाती है।

माइकल फैराडे एक महान एवं आदर्श विज्ञानवेत्ता थे तथा अकेले ही वैज्ञानिक विचारों मे भिड़े रहना चाहते थे, ताकि उनका ध्यान कहीं दूसरी तरफ न बंट जाय। इसलिए जब 'रॉयल सोसायटी' ने इन्हें रॉयल सोसायटी के प्रधान का पद देने का प्रस्ताव रखा, तो इन्होंने नम्रतापूर्वक उसे अस्वीकार कर दिया। इन्होंने तो 'पदवी' लेना भी अस्वीकार कर दिया। ये हमेशा सीधे-सादे माइकल फैराडे ही रहना पसंद करते थे।

किसी विज्ञानवेत्ता में क्या गुण होने चाहिए इस संबंध में उनके विचार कुछ इस प्रकार थे : *'उत्साही, परंतु सतर्क; प्रयोगों तथा सादृश्यों का मेल, काल से पहले के विचारों पर अविश्वास, सिद्धांत की अपेक्षा तथ्य को ज्यादा महत्व देना, सामान्यीकरण में जल्दी न करना और इस सबसे बढ़कर विचार और अवलोकन द्वारा पग-पग पर अपने विचारों को फिर से जांचना'।*

❐❐❐

पुस्तक समीक्षा

कंप्यूटर : एक परिचय

प्रो. एस. वेंकटाचलम, विभागाध्यक्ष, धातुकी अभियांत्रिकी एवं पदार्थ विज्ञान, भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान, पवई, मुंबई द्वारा लिखित एवं श्री विनोद कुमार प्रसाद, भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान, मुंबई द्वारा अनुदित "कंप्यूटर : एक परिचय" नामक पुस्तक जिसे हाल में पीतांबर पब्लिशिंग कंपनी प्रा. लि., नयी दिल्ली, ने प्रकाशित किया है, इस विषय पर आरंभिक ज्ञान देने वाली हिंदी में एक अच्छी पुस्तक है। विषय वस्तु का स्तर आम पाठक को ध्यान में रखकर किया गया। विषय की क्रमबद्धता को बनाये रखने के उद्देश्य से 210 पृष्ठों वाली इस पुस्तक को छोटे छोटे 26 अध्यायों में बांटा गया है। विषय का रोचक ढंग से परिचय दिया गया है और फिर आदि मानव युग से लेकर बीसवीं शताब्दी तक हुए कंप्यूटर क्षेत्र के लगभग सभी विकासों को संक्षिप्त रूप में सरलता के साथ प्रस्तुत किया गया है। विषय को समझाने के लिए अच्छे रेखा चित्रों की सहायता ली गयी है। अंग्रेजी समतुल्य शब्दों को अंग्रेजी अक्षरों में ही यथावश्यक जगहों पर दिया गया है जिससे पढ़ने के दौरान कोई गतिरोध न आये। पुस्तक के अंत में शब्दावली देने से इस पुस्तक की उपयोगिता काफी बढ़ गयी है।

पुस्तक की भाषा काफी सरल एवं प्रवाहमय है जिससे पाठक को यह उबाऊ नहीं लगती। अनुवाद के दौरान बहु प्रचलित शब्दों का चुनाव इस पुस्तक की एक विशेषता लगती है। हालांकि अंग्रेजी शब्दों एवं उनकी व्याख्या की यदाकदा पुनरावृति मिलती है। शायद यह इसलिए किया गया हो। कि यह एक आरंभिक पुस्तक है और पाठक को अर्थ ढूंढने के लिए शब्दावली या अन्यत्र पन्ने न पकलने पड़ें और उसका ध्यान अन्यत्र न बंट जाय। कुल मिलाकर कंप्यूटर के क्षेत्र में यह एक सरल एवं उपयोगी पुस्तक कही जा सकती है। **हालांकि पुस्तक अनुदित है परंतु काफी हद तक मौलिक ही लगती है।**

प्रकाशक : पीतांबर पब्लिशिंग कंपनी प्रा. लि., 888, ईस्ट पार्क रोड, करौल बाग, नयी दिल्ली-110 005
टेलीफोन :
(कार्यालय) 7770067, 522997, 7525528
(आवास) 5747161, 5721321, 5737437
फैक्स : 91-11-7776058
संस्करण : प्रथम, 1998.
मूल्य : मात्र 95/- रुपए

कैसे बनता है कुहरा ?

हम सभी लोग देखते हैं कि जाड़ा प्रारंभ होने के साथ ही कुहरा गिरना प्रारंभ हो जाता है एवं जाड़ा समाप्ति के साथ ही कुहरा गिरना बंद भी हो जाता है। प्रश्न यह उठता है कि कुहरा जाड़े में ही क्यों गिरता है एवं इसका निर्माण कैसे होता है ? हम यह भी देखते हैं कि अति सघन कुहरे के कारण अक्सर सड़क एवं वायुयान दुर्घटनाएं हो जाया करती हैं, जिससे काफी धन-जन की हानि होती है। इस प्रकार जाड़े के दिनों में धरातल पर धुएं के रूप में फैले इस आवरण को जान लेना आवश्यक है। एक बात और विचित्र है कि धरातल पर तो कुहरा जाड़े में गिरता है, किंतु महासागरों में कुहरे का साम्राज्य ग्रीष्म ऋतु में फैलता है। धरातल के निकट आर्द्रतापूर्ण वायु की परतों में जब शीतलन के फलस्वरूप संघनन की क्रिया होने लगती है तो वायु में जल के अत्यंत सूक्ष्म कण बन जाते हैं। वायुमंडल में इन्हीं जलकणों अथवा हिमकणों के असंख्य सूक्ष्म कणों की उपस्थिति के फलस्वरूप उसकी पारदर्शकता जब एक किलोमीटर से कम हो जाती है तो अंतर्राष्ट्रीय मौसम वैज्ञानिक मापदंड के अनुसार उसे "कुहरा" कहा जाता है। कुहरा कभी घना रहता है तो कभी झीना रहता है। वैसे कुहरे की सघनता वायुमंडलीय आर्द्रता, पवन के वेग, जलग्राही नाभिकों की मात्रा आदि पर निर्भर करती है।

कुहरे के निर्माण के लिए विशेष परिस्थितियां आवश्यक होती हैं। धरातल के निकट अत्यधिक आर्द्र वायु र्राशि के शीतलन के कारण जब उसमें संघनन की क्रिया प्रारंभ हो जाती है, तो कुहरे की उत्पत्ति होती है। वैसे इसके लिए वायु का तापमान ओसांक से नीचे जाना आवश्यक होता है। वायु के तापमान में कमी कई दशाओं में संभव हो सकती है। जैसे - आर्द्र वायु ठंडे धरातल के संपर्क में आने अथवा प्रसारण के कारण शीतल हो सकती है एवं उसका तापमान ओसांक तक कम हो सकता है। वायु राशि वाष्पीकरण के द्वारा जल वाष्प की आपूर्ति से भी यदा कदा संतृप्त हो जाती है क्योंकि समुद्र, नदी, झील, आदि की सतह से सदैव वाष्पीकरण होता रहता है, जिससे वायु जलवाष्प प्राप्त कर लेती है। ऊपरी वायुमंडल से होने वाली वर्षा से भी कभी-कभी वायु को जल प्राप्त हो जाता है। वाष्पीकरण से उत्पन्न कुहरे की उत्पत्ति प्रक्रिया के लिए वायुमंडल में शीतलन के द्वारा स्थायित्व पैदा हो जाना भी आवश्यक होता है। जब शीतकाल में महाद्वीपों के ऊपर की वायु में स्थायित्व पैदा हो जाता है तथा जैसे-जैसे उसमें जलवाष्प की पर्याप्त मात्रा पहुंच जाती है, कुहरे का निर्माण प्रारंभ हो जाता है। चूंकि समुद्रों पर उपर्युक्त परिस्थितियां ग्रीष्म ऋतु में उत्पन्न होती हैं, अतः महासागरों पर कुहरे की उत्पत्ति भी ग्रीष्म काल में ही होती है।

सामान्य तथ्य के अनुसार वायुमंडल के पूर्णतया संतृप्त हो जाने पर ही कुहरे की उत्पत्ति होती है, किंतु संघनन एवं जलग्राही नाभिकों की स्थिति में जल वायुमंडल में प्रदूषण की मात्रा अधिक हो जाती है, तो आपेक्षिक आर्द्रता जैसे ही 60 प्रतिशत से अधिक हो जाती है, संघनन क्रिया शुरु हो जाती है। फलस्वरूप कुहरा या धुंध की उत्पत्ति हो जाती है। आपेक्षिक आर्द्रता में कमी होने पर शुष्क धूल कणों एवं धुएं के कारण शुष्क धुंध का निर्माण होता है। किंतु जब आपेक्षिक आर्द्रता में वृद्धि हो जाती है तो बड़े नाभिकों पर संघनन क्रिया प्रारंभ हो जाती है। वायु के तापमान में लगातार कमी होने एवं आपेक्षिक आर्द्रता के 90 प्रतिशत के अधिक हो जाने पर कुहरा या धुंध कुहरा बन जाता है। इस प्रकार प्रदूषित वातावरण में 90 प्रतिशत आपेक्षिक आर्द्रता होने के पहले ही कुहरे की उत्पत्ति की प्रक्रिया प्रारंभ हो जाती है। कुहरे की उत्पत्ति धरातल से बहुत कम ऊंचाई पर होती है। समुद्रों में जहां पर गरम एवं ठंडी धाराएं मिलती हैं, कुहरा अधिक पड़ता है। कुहरे के समय धरातल के पास वायुमंडल बारीक एवं घने जल कणों से आच्छादित हो जाता है। फलस्वरूप निकटवर्ती वस्तुओं की भी प्रारंभिक दृष्यता समाप्त हो जाती है और यही कारण है कि सघन कुहरे में पास की वस्तुएं भी हमें दिखाई नहीं पड़ती हैं।

जलवायु वैज्ञानिकों ने कुहरे के अनेक प्रकार बताये हैं। यह वर्गीकरण कुहरे की निर्माण प्रक्रिया, वायुमंडल की दृश्यता एवं विशेषताओं आदि के आधार पर किया गया है, किंतु सामान्य रूप में देखा जाये तो कुहरे तीन प्रकार के होते हैं; (1) विकिरण कुहरा, (2) अभिवहन कुहरा, और (3) वाष्पन कुहरा।

सौर ताप से उष्णता प्राप्त करने के बाद जब पृथ्वी विकिरण के द्वारा ठंडी होने लगती है तो धरातलीय वायुमंडल की वायु संघनन होने लगती है। जिससे कुहरे का निर्माण होता है, इसे ही विकिरण कुहरा या स्थलीय कुहरा कहा जाता है। जब उष्ण वायु ठंडे धरातल के ऊपर से जाती है तो उससे उत्पन्न कुहरे को अभिवहन कुहरा कहा जाता है। उष्ण जल पर शीत वायु के बहने पर शत-प्रतिशत आपेक्षिक आर्द्रता होने से उत्पन्न यातायात की असुविधा को दूर करने हेतु कुहरे को नष्ट करने के उपाप भी ढूंढ लिये गये हैं। इनमें से कुछ उपाय प्राकृतिक हैं तो एवं कुछ उपाय कृत्रिम भी हैं।

डॉ. गणेश कुमार पाठक,
प्रतिभा प्रकाशन, बलिया - 277 001 (उ. प्र.)

विज्ञान-कविताएं

पर्यावरण

कट रहे हैं वन निर्ममता से
धधक रही है प्यारी धरती
हरे भरे खेत भी होंगे
आज नहीं तो कल परती।

विनाश की रफ्तार में नित
हो रही है भारी बढ़ती
निसंदेह इस बोझ की मार
सबके माथे पर है पड़ती।

प्रदूषण के बढ़ते प्रभाव में
रोगों से सांसें हैं लड़ती
आधुनिकता के परिवेश में नित
रोगों की है नयी कहानी गढ़ती।

चिमनियां जितना जहर उगलती
जिंदगी उतनी है सिमटती
कचड़े के बोझ से आहत
विवशता में है नदी तड़पती।

पर्यावरण को स्वच्छ रखें तो
जीवन की आयु है बढ़ती
ताजी हवा मस्ती में चलती
सरिता की निर्मल धारा बहती।

सभी की खुशी के लिए प्रकृति
एकदम आगे है रहती
भलाई वह चुपके से करती
हमारी प्रकृति है कितनी महती।

डॉ. अखिलेश्वर तिवारी,
60, शांतिनिकेतन कॉलोनी,
पो. खामला, नागपुर - 440 025

नाभिकीय ऊर्जा

एक समय यूरेनियम धातु पे,
न्यूट्रॉन से बमबारी करायी
चारों खाने चित पड़े वे
खंड-विखंड पड़े दिखलायी

एक का नाम तो बेरियम था
दूजे का क्रिप्टॉन
ऐसे समय में निकली जो ऊर्जा
उसने मानव में उत्पात मचाया।

घटना को देखकर बोले पंडित रसायन के
नाभिकीय विखंडन का बस यही काम है
लगा के रिएक्टर एकत्र कर लो सब ऊर्जा
इसी ऊर्जा का सुनो बहुत है दाम,
इसी ऊर्जा से चलें देश की मशीनें सब
कल-कारखानों में बस इसी का मुकाम है,
नाभिकीय विखंडन से प्राप्त हुई ऊर्जा, विखंडन
नाभिकीय ऊर्जा ही अब इसका नाम है।

सुश्री अविनाशी बारला
सुपुत्री श्री अशिमन बारला
ग्राम : लालगंज गाड़ी,
पोस्ट : लेटे (लापुंग)
जिला : रांची (बिहार) - 835 234

विज्ञान समाचार

भा. प. अ. केंद्र से :

1. विकिरण अनुप्रयोग और सुरक्षा संग्रहालय :

आयनीकारक विकिरण का अनुप्रयोग अब इस देश के चिकित्सा, उद्योग, कृषि व अनुसंधान क्षेत्रों में काफी मात्रा में हो रहा है। भा. प. अ. केंद्र इन अनुप्रयोगों को बढ़ावा देने में अत्यधिक क्रियाशील रहा है। देश में 10,000 से अधिक अस्पतालों के विभागों व क्लीनिकों द्वारा क्ष-किरणों का प्रयोग विभिन्न रोगों के निदान में किया जाता है, लगभग 200 संस्थाएं विकिरण द्वारा कैंसर का निदान व इलाज करती हैं। सैंकड़ों औद्योगिक इकाइयां रेडियो समस्थानिकों का उपयोग, अविनाशी परीक्षण (नॉन डेस्ट्रक्टिव टेस्टिंग), प्रक्रिया नियंत्रक यंत्रों, तेल व गैस की खोज तथा जन साधारण के काम आने वाले कई उपभोक्ता - पदार्थों, जैसे गैस-मैंटल आदि के निर्माण में करती हैं। कई प्रयोगशालाएं और विश्वविद्यालयों के विभाग, रेडियो समस्थानिकों का उपयोग भौतिकी व जैविकी की दुनिया के छिपे रहस्यों को सुलझाने में करते हैं।

विकिरण अनुप्रयोगों को पूर्णतया सुरक्षित बनाने में भी भा. प. अ. केंद्र सबसे आगे है। इस ध्येय की प्राप्ति में शिक्षण के साथ-साथ प्रशिक्षण की भूमिका महत्वपूर्ण है। रेडियोलॉजी भौतिकी व सलाहकारी प्रभाग, इस हेतु कई तरह के प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित करता है। प्रभाग ने हाल ही में, एक विकिरण सुरक्षा संग्रहालय की स्थापना की है, जिसमें विकिरण - सुरक्षा से जुड़ी, 200 से अधिक वस्तुओं को प्रदर्शित किया गया है। इनमें सूक्ष्म रेडियो सक्रिय स्रोतों से लेकर पूरे आकार का परत मोटाई मापक यंत्र (कागज उद्योग में प्रयुक्त) हैं। विभिन्न प्रकार के विकिरण उत्पादक यंत्र व उनके पुर्जे, विकिरण संसूचक, विकिरण मापी प्रतिरूप (फैंटम), सुरक्षा उपकरण, कर्मचारियों को मॉनीटरन करने वाली युक्तियां, गुणवत्ता प्रमाणित करने वाली किटें, विकिरण चिकित्सा में प्रयुक्त मशीनों के मॉडल, बेक्री थैरेपी उपकरण, अविनाशी परीक्षण में इस्तेमाल किये जाने वाले विभिन्न प्रकार के गामा-कैमरे, अलग-अलग तरह के न्यूक्लीय मापक संसूचक (Nucleonic Gauges) जैसे ; सतह संसूचक, मोटाई-मापक, संक्षारण-मॉनीटर तथा तेल-खोज में प्रयुक्त युक्तियां आदि; प्रदर्शित की गयी हैं।

संग्रहालय की एक विशेषता, यंत्रों के ऐसे पुर्जों व युक्तियों का संग्रह है, जिन्हें विद्यार्थी कार्यशील यंत्रों में देख नहीं सकते हैं। इनमें घूमते धनाग्र, ऋणाग्र व इस्तेमाल के दौरान होने वाली धनाग्र-क्षति को दर्शाने वाली वास्तविक क्ष-किरण नलिकाएं तथा विकिरण संसूचकों के विभिन्न काट, समांतरित्र (कॉलीमेटर) बीम-फ्लैटनर, भिन्न-भिन्न प्रकार के स्रोत (पेंसिल, गुटकानुमा, कैप्सूल आदि) हैं। साथ ही संग्रहालय में कई ऐतिहासिक वस्तुओं के चित्र भी हैं : जैसे कि प्रथम रेडियोग्राफ का चित्र, प्रारंभिक क्ष-किरण यंत्र का चित्र, विकिरण के आविष्कारक डब्ल्यू. सी. रॉन्जन व मैडम क्यूरी व उनकी पुस्तिका के चित्र, हमारे अपने चिकित्सा भौतिकी के प्रथम डॉ. रम्मैया नायडू और टाटा मैमोरियल अस्पताल में कैंसर चिकित्सा हेतु उनकी रैडॉन-निष्कर्षण की प्रयोगशाला के चित्र आदि। परमाणु ऊर्जा संस्थान एवं कई बाह्य संस्थाओं के योगदान से संग्रहालय की स्थापना संभव हो सकी है। विभाग के सभी प्रशिक्षण कार्यक्रमों में संग्रहालय को प्रत्यक्ष प्रमाण, दृश्य-शिक्षक तथा प्रेरणा स्रोत के रूप में उपयोगी पाया गया है। संस्थान में आने वाले देशी व विदेशी आगंतुकों ने संग्रहालय को देखा है। यह संग्रहालय, सी. टी. सी. आर. एस. (CTCRS), नियामक भवन, अणुशक्तिनगर, मुंबई में स्थित है ताकि अधिक से अधिक लोग इसे देख सकें।

2. खाद्य किरणक का निर्माण :

व्यवसायिक खाद्य किरणक (Food Irradiator) के निर्माण हेतु, भा. प. अ. केंद्र और मेसर्स आइसोटेक इरेडिएटर्स प्रा. लि. के मध्य 22 अगस्त 1997 को एक समझौता हुआ। इसके अनुसार किरणक प्रक्रिया की संपूर्ण जानकारी भा. प. अ. केंद्र देगा, व मेसर्स आइसोटेक, महाराष्ट्र के नासिक जिले में किरणक संयंत्र की स्थापना करेगा। प्रति वर्ष इस संयंत्र में 50,000 टन प्याज और आलू किरणित किये जायेंगे। किरणन से, उनमें होने वाला अंकुरण कम होगा जिससे उनकी निधानी आयु

(शेल्फ-लाइफ) बढ़ जायेगी । इस तरह अंकुरण से होनवाली हानि कम होगी जो एक अनुमान के अनुसार अभी उत्पाद का लगभग 20% है ।

3. रेडिएशन मॉनीटर निर्माण :

13 अगस्त 1997 को भा. प. अ. केंद्र व मेसर्स न्यूक्लियोनिक्स सिस्टम्स प्रा. लि. के मध्य, तकनीकी हस्तांतरण संबंधी समझौते हुए । इनके अंतर्गत केंद्र अपने यहां विकसित निम्न यंत्रों की तकनीकी जानकारी उन्हें प्रदान करेगा :

(i) रेडमान माइक्रो (Radmon Micro) : यह एक व्यापक प्रयोजन वाला (जनरल पर्पज) क्ष-किरण व गामा विकिरण मॉनीटर है जो माइक्रो प्रोसेसर पर आधारित है ।

(ii) किरणपुंज चिकित्सा डोज मापक (Beam Therapy Dosemeter) : यह डोज-मापक यंत्र भी माइक्रोप्रोसेसर पर आधारित है । यह सुवाह्य (पोर्टेबल) है । इससे त्वरक, क्ष-किरण व टेलीकोबाल्ट मशीनों से निकलने वाले विकिरण को नापा जा सकता है ।

रेडमान माइक्रो क्ष-किरणों व गामा विकिरण के लिए सुवाह्य, व्यापक प्रयोजनीय विकिरण मॉनीटर है । यह उन सभी चिकित्सा, औद्योगिक व शोध संस्थाओं में, जहां विकिरण स्रोतों का प्रयोग होता है, विकिरण सुरक्षा सर्वेक्षण के लिए उपयोगी है । इसमें ऊर्जा क्षतिपूरित (एनर्जी कंपनसेट) जी. एम. काउंटर विकिरण संसूचक के तौर पर व इलेक्ट्रॉनिक परिपथ में CMOS माइक्रोप्रोसेसर का इस्तेमाल किया गया है । इस यंत्र की परास 0 - 99.99 mR/h से 0 - 19.99 R/h (0 - 999.9 micro Sv/h से 0 - 199.99 micro Sv/h) है । इसमें दो पंक्तियों वाले अक्षरांकिक (अल्फा न्यूमरिक) डॉट मैट्रिक्स LCD - प्रदर्शक-पटल का उपयोग कर डोज दर को आंकिक तथा अनुरूप (एनालोग) स्तंभ ग्राफ से दर्शाया जाता है । प्रयोग-कर्ता अपनी मर्जी से पारंपरिक इकाई (रॉन्जन) अथवा नयी इकाई (सीवर्ट) में विकिरण दर को पढ़ सकता है । जब भी प्राप्त एकत्रीकृत (इंटीग्रेटेड) विकिरण डोज, प्रयोगकर्ता द्वारा स्वयं चुनी डोज से, अधिक हो जाती है तो अलार्म घंटी बजने लगती है । इस यंत्र में परास चयन स्वतः होता है तथा इस्तेमाल के दौरान उपयोगकर्ता के दोनों हाथ मुक्त रहते हैं । प्रयोग करते समय विकिरण का संसूचन या परिपथ-असफलता की सूचना एक त्रुटि-संसूचक सॉफ्टवेयर द्वारा दी जाती है ।

त्वरक, क्ष-किरण व टेलिकोबाल्ट मशीनों से निकलने वाले विकिरण को मापने के लिए पुंज-चिकित्सा डोजमापक एक अत्याधुनिक, सुवाह्य यंत्र है । इसे क्ष-किरण पुंजों की HVT के मूल्यांकन के लिए पूर्व निर्धारित समय अथवा डोज विधि (mode), दोनों में प्रयुक्त कर सकते हैं । यंत्र में विकिरण संसूचक का कार्य 0.5 cc वायु तुल्यांक आयनिक कक्ष करता है । डोज मापक में कई प्रगत सुविधाएं हैं : जैसे स्वतः दाब व तापमान परिवर्तनों के अनुसार सुधार, चयनीय ध्रुवता वाला ध्रुवता-विभव, औसत विकिरण डोज का प्रदर्शन, आयनित कक्ष की संग्रहण-दक्षता का मूल्यांकन करने के लिए द्रव क्रिस्टल प्रदर्श (LCD), इलेक्ट्रोमीटर प्रवर्धक का स्वतःशून्यन, ध्वनि अलार्म, PC से जोड़ सकने के लिए श्रेणी अंतराफलक (इंटरफेस), जिससे अंशांकन (केलीब्रेशन) कर सकें तथा अंशांकन गुणक व तिथि का संग्रहण, आदि।

4. अमेरिका को थोरिया बटनों का निर्यात :

भा. प. अ. केंद्र ने थोरियम ऑक्साइड के उच्च घनत्व वाले वांछित आकार व गुणवत्ता के बटनों को अति परिशुद्धता से बनाकर जनरल इलेक्ट्रिक कंपनी पॉवर सिस्टम्स, यू. एस. ए. को निर्यात करने में सफलता प्राप्त की है । निर्माण की प्रक्रिया में थोरियम ऑक्साइड के चूर्ण को सुखाना, खूब महीन पीसना, 10 MPa से अधिक दाब पर दो बार पूर्व संहतिकरण (pre compaction) व कणिकायन तथा वांछित आकार के बटनों का 30 MPa से अधिक दाब पर आखिरी संहतिकरण व फिर उनका आर्गन - 8%, हाइड्रोजन वातावरण में 1923 केल्विन तापमान पर कई घंटों तक सिंटरण करना आवश्यक था। निर्माण की पूरी प्रक्रिया ग्लाव-बॉक्स की श्रृंखला में नाइट्रोजन के वातावरण में की गयी ताकि पाउडर के हस्तन के दौरान उसमें पिंड (cake) न बनें । चूंकि 2073 केल्विन पर सिंटरण करके भी उच्च घनत्व के थोरिया कंपैक्टों का

पाना अति कठिन है, अत: मैगनेसिया को सिंटरण-सहायक के रूप में मिलकार 1923 केल्विन पर ही सिंटरण करने से उच्च घनत्व वाले थोरिया बटन प्राप्त हो गये ।

बड़े-बड़े विद्युत जनित्रों की शीतलक गैस के सतत मॉनीटरन में, इन बटनों का उपयोग कर, गर्म-स्थलों (हॉट-स्पॉटों) की सूचना प्राप्त की जाती है ताकि वहां पर होने वाले विद्युतरोधन की असफलता को रोककर विद्युत जनित्रों को बंद करने की मजबूरी से बचा जा सके ।

प्रस्तुति : डॉ. कैलाश चंद्र भल्ला,
संपादक "वैज्ञानिक", रसायनिकी प्रभाग,
भा. प. अ. केंद्र, मुंबई - 400 085

संगोष्ठी समाचार

1. आधुनिक युग में कंप्यूटर :

हिंदी विज्ञान साहित्य परिषद ने, हिंदी दिवस के उपलक्ष में, "आधुनिक युग में कंप्यूटर" विषय पर 22 सितंबर 1997 को एक कार्यशाला का आयोजन किया ।

इस कार्यशाला के उद्घाटन समारोह में भा. प. अ. केंद्र के नियंत्रक श्री. आर. गणेशन ने अपने अध्यक्षीय संबोधन में हिंदी से संबंधित कार्यों के लिए अपना पूरा सहयोग एवं समर्थन देने का वादा किया । डॉ. सी. के. गुप्ता, अध्यक्ष हिं. वि. सा. परिषद एवं निदेशक, पदार्थ वर्ग भा. प. अ. केंद्र ने कार्यशाला का उद्घाटन किया । उन्होंने अपने भाषण में हमारे जीवन के प्रत्येक क्षेत्र पर कंप्यूटर का प्रभाव पड़ना, इनकी कीमतों में भारी कमी होने के कारण इनका प्रयोग कई क्षेत्रों में संभव हो पाना, आम आदमी का भी इनको प्रयोग कर पाना तथा कंप्यूटरों का हिंदी तथा अन्य प्रादेशिक भाषाओं में काम करने के लिए उपलब्ध हो जाने के बारे में बताया । श्री हरीश कुमार कौंरा, अध्यक्ष कंप्यूटर प्रभाग, भा. प. अ. केंद्र ने प्रमुख वार्ता प्रस्तुत की । उनकी वार्ता का विषय था "विकास एवं अनुसंधान में कंप्यूटर का महत्व ।" उन्होंने कंप्यूटर के क्षेत्र में तेजी से हो रही प्रगति और विज्ञान और इंजीनियरिंग के क्षेत्र में उनका बढ़ता उपयोग, साथ ही साथ दूसरे क्षेत्रों में लगभग सभी विषयों में कंप्यूटरों के उपयोगों की चर्चा की । आपने कहा कि संचार के क्षेत्र में प्रगति के कारण कंप्यूटरों की उपयोगिता का क्षेत्र और भी अधिक बढ़ गया है । भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र में कंप्यूटर के क्षेत्र में अनुसंधान के बारे में भी उन्होंने बताया । भविष्य में कंप्यूटरों का क्या स्वरूप होगा इस कल्पना को भी प्रस्तुत किया ।

डॉ. अशोक कुमार सूरी, अध्यक्ष पदार्थ संसाधन प्रभाग, भा. प. अ. केंद्र ने प्रतिभागियों एवं अतिथियों का स्वागत किया । संगोष्ठी संयोजिका श्रीमती रश्मि रस्तोगी ने संगोष्ठी का परिचय देते हुए कंप्यूटर के विभिन्न और बढ़ते हुए उपयोग एवं कार्यशाला में प्रस्तुत की जाने वाली वार्ताओं के बारे में बताया । उद्घाटन सत्र के अंत में हिं. वि. सा. परिषद के उपाध्यक्ष श्री राम निवास आर्य ने सभी संबंधित महानुभावों को धन्यवाद दिया ।

इस संगोष्ठी में प्रमुख वार्ता के अतिरिक्त कंप्यूटर संबंधित विषयों पर सात अन्य वार्ताएं प्रस्तुत की गयीं, जिनका विवरण प्रकार है :

1. *'पर्सनल कंप्यूटर,'* श्री अशोक कुमार श्रीवास्तव, कंप्यूटर प्रभाग, भा. प. अ. केंद्र, मुंबई - 400 085
2. *'कंप्यूटर संचार नेटवर्किंग,'* श्री. ए. जी. आप्टे, (कं. प्र.)
3. *'इंटर-नेट,'* श्री आर. एस. मुंदडा (कं. प्र.)
4. *'डाटा बेस प्रबंधन प्रणाली,'* श्री रवि कुमार माथुर (कं. प्र.)
5. *'सुपर कंप्यूटर और हम,'* डॉ. (श्रीमती) एस. एम. महाजन (कं. प्र.)
6. *'प्रतिबिंब संसाधन,'* श्रीमती रश्मि रस्तोगी (कं. प्र.)
7. *'कंप्यूटर क्षेत्र में रोजगार की संभावनाएं,'* श्री रमेश चंद्र पंत, अधीक्षक-सायरस रिएक्टर

इस संगोष्ठी में 300 प्रतिभागियों ने भाग लिया । ये सब केंद्र में कार्यरत प्रशासनिक एवं सहायक कर्मचारी थे और इन सबने इस सामयिक एवं महत्वपूर्ण विषय पर सरल भाषा में दी गयी वार्ताओं का भरपूर लाभ उठाया और जानकारी प्राप्त की ।

इन वार्ताओं के दौरान श्री पी. एस. ढ़ेकने (कं. प्र.), श्री जी. पी. श्रीवास्तव (अध्यक्ष संसाधन यंत्रीकरण प्रभाग), श्री विनोद कुमार चट्ढा (इलेक्ट्रॉनिकी प्रणाली प्रभाग) ने विभिन्न सत्रों की अध्यक्षता की ।

-श्रीमती रश्मि रस्तोगी, कंप्यूटर प्रभाग, भापअ केंद्र

2. स्वस्थ जीवन शैली :

हिंदी विज्ञान साहित्य परिषद, भा. प. अ. केंद्र, मुंबई ने हर वर्ष की भांति केंद्र के सहायक कर्मचारियों के लिए 23 सितंबर, 1997 को 'स्वस्थ जीवन शैली' विषय पर एक संगोष्ठी का सफलता पूर्वक आयोजन किया । यह संगोष्ठी केंद्र के सेंट्रल कांप्लेक्स सभागृह में संपन्न हुई ।

इस संगोष्ठी का ध्येय केंद्र में कार्यरत कर्मचारियों को स्वास्थ्य से संबंधित विषयों के बारे में जानकारी प्रदान करना तथा उन्हें नशीले पदार्थों के सेवन से होने वाली हानियों से सावधान करना था । संगोष्ठी के उद्घाटन सत्र में केंद्र के निदेशक श्री अनिल काकोडकर, पदार्थ वर्ग के निदेशक व परिषद अध्यक्ष डॉ. सी. के. गुप्ता, आयुर्विज्ञान वर्ग की सहनिदेशिका डॉ. ए. एम. सैम्युल, आयुर्विज्ञान प्रभागाध्यक्ष डॉ. बी. जे. शंकर, परिषद उपाध्यक्ष श्री रामनिवास आर्य, पदार्थ संसाधन प्रभाग के अध्यक्ष एवं परिषद सचिव डॉ. अशोक सूरी सहित केंद्र के वरिष्ठ वैज्ञानिक व अधिकारी गण उपस्थित थे । संगोष्ठी में केंद्र के लगभग 300 कर्मचारियों ने भाग लिया ।

डॉ. शंकर, डॉ. डी. एन. पाहुआ, डॉ. कौस्तुभ मजुमदार, डॉ. भरत शाह, डॉ. (कुमारी) वैशाली थत्ते आदि विशेषज्ञों ने मानव स्वास्थ्य, संतुलित आहार, मानसिक स्वास्थ्य, तंबाकू, शराब, मादक द्रव्यों आदि के बारे में सरल हिंदी में वार्ताएं प्रस्तुत कीं । संगोष्ठी की संयोजिका डॉ. (श्रीमती) आशा दामोदरन ने मानसिक तनाव से होने वाली हानियों तथा उससे बचाव के उपायों पर प्रकाश डाला । इस अवसर पर एड्स के बारे में एक फिल्म भी प्रदर्शित की गयी । अंतिम सत्र में डॉ. सैम्युल, डॉ. दामोदरन तथा अन्य विशेषज्ञों ने एक पैनल परिचर्चा के माध्यम से प्रतिभागियों के प्रश्नों व शंकाओं का समुचित समाधान किया । इस प्रश्नोत्तर सत्र में प्रतिभागियों की जिज्ञासा, उत्साह और प्रश्नों की विशिष्टता एवं गुणवत्ता ने सिद्ध कर दिया कि यह संगोष्ठी प्रतिभागियो में स्वास्थ्य के प्रति एक संतुलित दृष्टिकोण अपनाने और जागरुकता पैदा करने के अपने उद्देश्य में पूर्णतया सफल रही ।

प्रस्तुति : **डॉ. अशोक कुमार सूरी,**
सचिव, हिंदी विज्ञान साहित्य परिषद्

विज्ञान पहेलियां

1. रंगहीन, क्रिस्टलीय जल में विलेय हूँ,
औषधियां व दर्पण बनाने में आता काम ।
प्रकाश से प्रभावित होता हूँ,
फोटोग्राफी में मेरा काम ।।

2. सफेद क्रिस्टलीय ठोस हूँ,
अल्कोहल में अविलेय हूँ ।
पानी साफ करने में उपयोगी हूँ,
दंत मंजनों में मौजूद हूँ ।।

3. डच विधि द्वारा मैं बनता हूँ,
सफेद अक्रिस्टलीय चूर्ण ।
सफेद पेस्ट के आता काम,
सतह पकड़ने की शक्ति असीम ।।

4. हल्के पीले रंग का अक्रिस्टलीय ठोस,
विलयन इसका दूधिया होता ।
विरंजक में है इसका उपयोग,
क्लोरोफॉर्म भी इससे बन जाता ।।

5. वसा में विलेय हूँ,
मेरे स्रोत हैं गाजर, आम ।
मेरी कमी से नेत्र रोग हो जाता,
झटपट बोलो मेरा नाम ।।

6. सूर्य की किरणों से मैं बन जाऊँ,
दूध व अंडे मेरा धाम ।
मेरी कमी से हो सूखा रोग,
अब तो बोलो मेरा नाम ।।

1. सिल्वर नाइट्रेट
2. पोटाश फिटकरी
3. सफेदा
4. ब्लीचिंग पाउडर
5. विटामिन-ए
6. विटामिन-डी

सुश्री अबिनाशी बरला,
सुपुत्री श्री अशियन बरला, लालगंज गाड़ी,
लेटे (लापुंग), रांची - 835 234 (बिहार)

हिंदी विज्ञान साहित्य परिषद
वार्षिक प्रतिवेदन - 1996-97

हिंदी विज्ञान साहित्य परिषद की 1996-97 की गतिविधियों का ब्यौरा इस प्रकार है ।

"वैज्ञानिक" का प्रकाशन :

परिषद की प्रमुख गतिविधियों में त्रैमासिक पत्रिका "वैज्ञानिक" का प्रकाशन पूर्ववत् हुआ और इस वर्ष चार अंकों का प्रकाशन सुचारुरूप से संपन्न हुआ । पिछले कई वर्षों से वैज्ञानिक का प्रकाशन भापअ केंद्र के सौजन्य से हो रहा है । वैज्ञानिक के सभी अंकों में वैज्ञानिक लेखों, टिप्पणियों एवं कविताओं के साथ-साथ विज्ञान समाचार के अंतर्गत भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र में विकसित तकनीकों एवं शोधकार्यों का भी उल्लेख रहा । कुल मिलाकर 33 लेख तथा 11 टिप्पणियां प्रकाशित की गयीं । जनवरी-मार्च, 1996 के अंक में अखिल भारतीय विज्ञान लेख प्रतियोगिता - 1995 के कुछ पुरस्कृत लेखों को प्रकाशित किया गया । संपादकीय के माध्यम से कुछ महत्वपूर्ण मुद्दों पर विचार रखे गये जैसे कि "आधुनिक "संचार माध्यम एवं जनजीवन", "इलेक्ट्रॉनिकी पदार्थ : शोध एवं विकास आवश्यक" तथा "भारतीय भाषाओं में विज्ञान लेखन" । "वैज्ञानिक" के प्रकाशन की समग्रता को देखते हुए परिषद, विशेष रुप से डॉ. एम. आर. बालकृष्णन, अध्यक्ष, पुस्तकालय एवं सूचना सेवाएं प्रभाग, वैज्ञानिक के प्रमुख संपादक डॉ. गोविंद प्रसाद कोठियाल एवं संपादन मंडल के उनके सहयोगियों सर्वश्री हरिओम मित्तल, डॉ. कैलाश चंद्र भल्ला, डॉ. राज नारायण पांडेय, श्री राम नाथ जिंदल तथा वैज्ञानिक के व्यवस्थापक श्री इंद्र कुमार शर्मा एवं उनके सहयोगियों की आभारी है ।

"विज्ञान पत्रिका" का प्रकाशन :

गत चार वर्षों से केंद्र के कर्मचारियों को भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र में चल रही वैज्ञानिक गतिविधियों एवं विज्ञान के अन्य विषयों से संबंधित जानकारी देने के लिए "विज्ञान पत्रिका" का प्रकाशन निरंतर किया जाता रहा । इस कार्य के लिए इस पत्रिका के मुख्य संपादक डॉ. शिवदुलारे प्रसाद अवस्थी व काशी नाथ पांडेय के प्रति परिषद धन्यवाद ज्ञापन करती है ।

अखिल भारतीय लेख प्रतियोगिता :

इस वर्ष अखिल भारतीय विज्ञान लेख प्रतियोगिता का आयोजन भी यथावत् किया गया । इस प्रतियोगिता के 6 लेखों को पुरस्कृत किया गया जिनको 3900/- रुपये की धनराशि पुरस्कार के रुप में दी गयी । लेख प्रतियोगिता के संयोजक श्री इंद्रकुमार शर्मा तथा निर्णायक मंडल के सदस्यों के प्रति परिषद अपना आभार प्रकट करती है ।

वैज्ञानिक प्रश्नमंच :

हमारे प्रथम प्रधानमंत्री पं. जवाहरलाल नेहरु के जन्मदिन के उपलक्ष्य में आठ वर्ष पूर्व परिषद ने बच्चों के लिए वैज्ञानिक प्रश्नमंच का आयोजन आरंभ किया था । इसी कड़ी में आठवें प्रश्नमंच का आयोजन नवंबर, 1996 में हुआ जिसमें अणुशक्तिनगर स्थित केंद्रीय विद्यालयों के बच्चों ने उत्साहपूर्वक भाग लिया । आयोजन में केंद्रीय विद्यालयों के प्राध्यापकों एवं अध्यापकों को आमंत्रित किया गया था । इस कार्यक्रम की अध्यक्षता, परिषद अध्यक्ष डॉ. चिरंजीव कुमार गुप्ता ने की । केंद्र निदेशक श्री अनिल काकोडकर समारोह के प्रमुख अतिथि थे । मुख्य अतिथि ने बच्चों को अच्छे प्रदर्शन के लिए बधाई दी एवं विजेताओं को पुरस्कार दिये । इस समारोह के सफल आयोजन के लिए परिषद डॉ. विजय कुमार मनचंदा एवं उनके सहयोगियों के प्रति आभारी है ।

राजभाषा वार्ताएं :

हिंदी विज्ञान साहित्य परिषद तथा कार्यान्वयन समिति के संयुक्त तत्वावधान में इस वर्ष दो वार्ताओं का आयोजन किया गया । "रसायन विज्ञान - आवश्यकताएं एवं चुनौतियां" विषय पर 27 सितंबर 1996 को भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान के प्रो. अनिल कुमार सिंह ने एक वार्ता दी । दूसरी वार्ता का विषय था "मानव अनुवंशिकी में आधुनिक विकास - सामाजिक, वैधानिक एवं नैतिक समस्याएं ।" इसे भापअ केंद्र के आण्विक जीव विज्ञान के अध्यक्ष डॉ. एस. के. महाजन ने प्रस्तुत किया । वार्ताओं के आयोजन के लिए परिषद राजभाषा वार्ता संयोजक डॉ. राजेंद्र स्वरुप के प्रति अपना आभार प्रकट करती है ।

नोबेल पुरस्कार : किसे और क्यों ? - एक संगोष्ठी :

विज्ञान के क्षेत्र में दिये जाने वाले श्रेष्ठतम पुरस्कार (नोबेल पुरस्कार) विजेता वैज्ञानिकों तथा उनके कार्यों के बारे में जानकारी देने के उद्देश्य से हिंदी विज्ञान साहित्य परिषद पिछले कुछ वर्षों से एक अर्ध-दिवसीय संगोष्ठी का आयोजन करती आ रही है। इस वर्ष 1996 के भौतिकी, रसायनिकी तथा फिजिओलॉजी एवं मेडिसिन के नोबेल पुरस्कार विजेता वैज्ञानिकों के कार्यों पर प्रकाश डालने हेतु 15 जनवरी, 1997 को इस कड़ी की छठी संगोष्ठी का आयोजन किया गया। इस समारोह में मुख्य अतिथि श्री अनिल कुमार आनंद, निदेशक, रिएक्टर परियोजना वर्ग एवं तकनीकी समन्वय तथा अंतर्राष्ट्रीय वर्ग ने इसे विज्ञान के क्षेत्र में एक महत्वपूर्ण जानकारी देने वाला कार्यक्रम बताया। इस वर्ष भौतिकी में नोबेल पुरस्कार प्रो. डेविड ली. डगलस ली, ओशेराफ और रॉबर्ट सी रिचर्डसन को हीलियम में अति तरलता की खोज पर दिया गया। रसायनिकी के क्षेत्र में "फुलरीन" की खोज पर प्रो. रॉबर्ट कर्ल, प्रो. रिचर्ड स्मेल्ली (अमरीका), प्रो. हेरॉल्ड क्रोटो (ब्रिटेन) को दिया गया। इस विषय की जानकारी डॉ. शैलेंद्र कुमार कुलश्रेष्ठ ने दी। फिजिओलॉजी एवं मेडिसिन के क्षेत्र में कोशिकाओं द्वारा मध्यस्थ असंक्राम्य (इम्यून) सुरक्षा की विशिष्टता संबंधी खोज पर प्रो. पीटर डोहर्टी (आस्ट्रेलिया) तथा प्रो. रोल्फ जिंकर नागल (स्विटजरलैंड) को पुरस्कार दिया गया। इस विषय की जानकारी डॉ. कृष्णा बी. सैनिस ने दी। परिषद डॉ. कुलश्रेष्ठ, डॉ. सैनिस तथा इस कार्यक्रम के संयोजक डॉ. गोविंद प्रसाद कोठियाल की आभारी है।

वैज्ञानिक संगोष्ठियां एवं कार्यशालाएं :

इस वर्ष (अप्रैल 1996 - मार्च 1997) एक वैज्ञानिक संगोष्ठी 11-12 अप्रैल, 1996 को वड़ोदरा में हुई तथा इसके अतिरिक्त 3 संगोष्ठियां सितंबर - नवंबर में संपन्न हुईं।

"उद्योग में संक्षारण, नियंत्रण एवं पर्यावरण प्रदूषण" विषय पर वड़ोदरा में एक द्वि-दिवसीय संगोष्ठी का आयोजन 11-12 अप्रैल, 1996 को किया गया। यद्यपि यह संगोष्ठी अप्रैल में संपन्न हुई लेकिन इसकी सभी तैयारियां लगभग पिछले वर्ष ही कर ली गयी थीं। अतः पिछले वर्ष के प्रतिवेदन में इसको भी शामिल किया गया था। संगोष्ठी हिंदी विज्ञान साहित्य परिषद, इंजीनियरी व प्रौद्योगिकी संकाय, महाराजा सयाजीराव विश्वविद्यालय, वड़ोदरा, इंस्टीट्यूशन ऑफ इंजीनियर्स तथा इंस्टीट्यूशन ऑफ मेटल्स, वड़ोदरा के तत्वावधान में संयुक्त रूप से हुई। उद्योग, अनुसंधान और विकास तथा शिक्षा संस्थानों से लगभग 100 प्रतिभागियों ने इस संगोष्ठी में सक्रिय भाग लिया। पांच तकनीकी सत्रों में विषय विशेषज्ञों द्वारा 12 आमंत्रित वार्ताएं प्रस्तुत की गयीं। संगोष्ठी के दूसरे दिन, भारी पानी संयंत्र, वड़ोदरा को देखने का कार्यक्रम भी रखा गया जिसमें लगभग 35 प्रतिभागियों ने भाग लिया। अध्यक्षीय संबोधन में परिषद अध्यक्ष ने पर्यावरण प्रदूषण तथा उद्योग में संक्षारण नियंत्रण पर बल दिया और कहा कि कहीं ऐसा न हो कि प्रौद्योगिकी विकास मानव जाति के लिए अभिशाप बन जाये। संगोष्ठी के संयोजक महाराजा सयाजीराव विश्वविद्यालय के धातुकी विभाग के प्रो. के. बाबा पै तथा भापअ केंद्र के धातुकी प्रभाग के डॉ. मनोहर तोतलानी थे।

"आइसोटोप उत्पादन एवं उपयोग" विषय पर भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र में एक दिवसीय संगोष्ठी का आयोजन 12 सितंबर, 1996 को किया गया। संगोष्ठी का आयोजन आइसोटोप प्रभाग एवं परिषद के तत्वावधान में संयुक्त रूप से किया गया, इसमें केंद्र के लगभग 300 प्रशासनिक, एवं सहायक कर्मचारियों ने सक्रिय भाग लिया। इस संगोष्ठी का मुख्य उद्देश्य केंद्र के कर्मचारियों को केंद्र तथा परमाणु ऊर्जा विभाग की विभिन्न गतिविधियों की सरल भाषा में जानकारी देना था जिससे कि उनमें भी वैज्ञानिक उत्सुकता जागृत हो सके। संगोष्ठी का उद्घाटन केंद्र के निदेशक श्री अनिल काकोडकर ने किया, इसी मौके पर निदेशक महोदय ने परिषद के अध्यक्ष एवं उपाध्यक्ष द्वारा लिखित एक हिंदी पुस्तक "परमाणु ऊर्जा एवं परमाणु ईंधन" का विमोचन भी किया। परिषद संगोष्ठी संयोजक श्री ए. वी. जाधव के प्रति अपना आभार व्यक्त करती है।

"इलेक्ट्रॉनिकी उद्योग में प्रगति एवं पर्यावरण संतुलन के नये आयाम" विषय पर कुमायूं विश्वविद्यालय के सहयोग से अक्तूबर 3-4, 1996 को उत्तर प्रदेश

प्रशासन अकादमी, नैनीताल के सभागृह में एक द्वि-दिवसीय संगोष्ठी आयोजित की गयी। उद्घाटन समारोह में डॉ. बी. के. जोशी, कुलपति कुमायूं विश्वविद्यालय, डॉ. रघुनंदन सिंह टोलिया, प्रमुख सचिव, उत्तर प्रदेश शासन एवं अध्यक्ष, हिल इलेक्ट्रॉनिक्स, श्री अनिल कुमार आनंद, निदेशक, रिएक्टर परियोजना वर्ग तथा तकनीकी समन्वय एवं अंतर्राष्ट्रीय संबंध वर्ग, भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र, मुंबई तथा डॉ. सी. के. गुप्ता, निदेशक, पदार्थ वर्ग एवं परिषद अध्यक्ष ने संगोष्ठी में उपस्थित लगभग 250 विशेषज्ञों एवं प्रतिभागियों को संबोधित किया। उपस्थित गणमान्य व्यक्तियों एवं विषय विशेषज्ञों ने उत्तराखंड क्षेत्र में इलेक्ट्रॉनिकी उद्योग के विकास की असीम संभावनाओं की ओर ध्यान आकर्षित किया। संगोष्ठी के सात सत्रों में कुल मिलाकर उन्नीस वार्ताएं प्रस्तुत की गयीं। इन वार्ताओं में इलेक्ट्रॉनिकी तथा पर्यावरण के विभिन्न पहलुओं पर गहनता से विचार किया गया। उत्तर प्रदेश राजकीय वैधशाला ने प्रतिभागियों के लिए 2 अक्तूबर की रात्रि को आकाशदर्शन का एक कार्यक्रम आयोजित किया जिसमें कई रोचक जानकारियां दी गयीं। संगोष्ठी के सफलतापूर्वक आयोजन के लिए परिषद संयोजक, भा प अनुसंधान केंद्र के श्री रमेशचंद्र पंत तथा कुमायूं विश्वविद्यालय की स्थानीय आयोजन समिति के अध्यक्ष प्रो. बलवंत सिंह राजपूत के प्रति अपना आभार व्यक्त करती है।

मानव स्वास्थ्य संगोष्ठी श्रृंखला की दूसरी कड़ी के रूप में भा प अ केंद्र के आयुर्विज्ञान प्रभाग, विकिरण चिकित्सा केंद्र तथा टाटा मेमोरियल अस्पताल के संयुक्त तत्वावधान में "कैंसर निदान एवं चिकित्सा" विषय पर एक दिवसीय संगोष्ठी का आयोजन 8 नवंबर, 1996 को अणुशक्तिनगर स्थित मल्टीपरपज सभागृह में किया गया। संगोष्ठी परिषद के सदस्यों तथा परमाणु ऊर्जा विभाग के कर्मचारियों तथा उनके परिजनों के लाभार्थ आयोजित की गयी थी, इसमें लगभग 300 प्रतिभागी उपस्थित थे। संगोष्ठी का उद्घाटन टाटा मेमोरियल अस्पताल की निदेशिका डॉ. (कुमारी) के. ए. दिनशा ने किया। अपने उद्घाटन भाषण में उन्होंने भारत जैसे विकासशील देशों के परिप्रेक्ष्य में कैंसर रोग के कुछ मुख्य कारणों व इसके नियंत्रण हेतु किये जा रहे विशेष कार्यक्रमों की समीक्षा की। समारोह की अध्यक्षता पदार्थ वर्ग के निदेशक एवं परिषद अध्यक्ष डॉ. सी. के. गुप्ता ने की। कुल आठ वार्ताएं प्रस्तुत की गयीं। वार्ताओं में कैंसर समस्या, निदान, उपचार, रेडियो चिकित्सा आदि विषयों पर विस्तार से चर्चा की गयी तथा एक वीडियो फिल्म एवं जन जागरण के उद्देश्य से एक प्रदर्शनी भी आयोजित की गयी। विकिरण चिकित्सा केंद्र की अध्यक्ष डॉ. ए. एम. सैम्युल एवं सिरेमिक तकनीकी अनुभाग के अध्यक्ष डॉ. रामप्रसाद इस कार्यक्रम के संयोजक थे। कार्यक्रम के सफलतापूर्वक आयोजन के लिए परिषद इनके प्रति आभारी है।

सदस्यता :

इस वर्ष के अंत तक सदस्यों की संख्या इस प्रकार रही :-

	विभागीय	अन्य	संस्थागत
आजीवन सदस्य :	497	574	115
साधारण सदस्य :	32		
कुल सदस्य :		1218	

इस वर्ष परिषद के कार्यक्रम सुचारु रूप से संपन्न हुए और इसमें काफी सफलता मिली तथा इन प्रयासों को सभी ने सराहा। विशेष कर "मानव स्वास्थ्य" संगोष्ठी श्रृंखला की दूसरी कड़ी "कैंसर निदान एवं चिकित्सा" को, सदस्यों की मांग थी कि इस प्रकार के और भी कार्यक्रम आयोजित किये जायें। इन सभी कार्यक्रमों की सफलता का श्रेय परिषद के अध्यक्ष डॉ. सी. के. गुप्ता तथा उपाध्यक्ष श्री राम निवास आर्य के मार्गदर्शन एवं कार्यकारिणी के सभी सदस्यों एवं कार्यक्रमों के संयोजकों तथा उनके सहयोगियों को जाता है। प्रशासनिक एवं वित्तीय सहायता के लिए भापअ केंद्र के नियंत्रक महोदय, आंतरिक वित्तीय सलाहकार, अध्यक्ष, कार्मिक प्रभाग, अध्यक्ष, पुस्तकालय एवं सूचना सेवाएं प्रभाग, राजभाषा अधिकारी व उप स्थापना अधिकारी (मुद्रण) तथा हिंदी कक्ष के प्रति भी हम आभारी हैं। वित्तीय सहायता के लिए हम इंडियन रेअर अर्थ्स, ब्रिट व एन. एफ. सी. के विशेष रूप से आभारी हैं। हिंदी से जुड़ी दो अन्य संस्थाओं - राजभाषा कार्यान्वयन समिति तथा केंद्रीय सचिवालय हिंदी परिषद से भी हमें काफी सहयोग मिला है। इसके लिए हम सर्वश्री एस. के. शर्मा, डॉ. वी. रामशेष, डॉ. पी. सी. केसवन तथा डॉ. अशोक ताम्हनकर के भी विशेष रूप से आभारी हैं।

— डॉ. अशोक कुमार सूरी (सचिव)

विकिरण समस्थानिक [रेडियोआइसोटोप]

वैज्ञानिक एवं प्रौद्योगिकीय प्रगति हेतु अनिवार्य साधन

विकिरण एवं आइसोटोप प्रौद्योगिकी बोर्ड (बी आर आई टी) ने देश में विविध रेडियो उत्पादों की बढ़ती हुई मांग को पूरा करने में स्वयं को पूर्णतया समर्पित किया है। रेडियोआइसोटोप के उत्पादन एवं अनुप्रयोग हेतु इस क्षेत्र में अनुसंधान की कुछ उत्कृष्ट सुविधाएं ट्रॉंबे में स्थापित की गयी हैं। स्वदेशी अनुसंधान एवं विकास कार्यों पर निर्भर रहते हुए 'ब्रिट' (बी आर आई टी) ने रेडियो आइसोटोप उत्पादों का विस्तृत रूप से विकास किया है एवं देश - विदेश के 1000 से भी अधिक संगठनों की आवश्यकताओं की आपूर्ति की है।

कुछ महत्वपूर्ण उत्पाद एवं सेवाएं इस प्रकार हैं :

- **विकिरण भेषज (रेडियोफार्मास्युटिकल्स) :**
  विभिन्न प्रकार के रोगों के निदान एवं थायराइड रोगों के उपचार हेतु।
- **विकिरण प्रतिरक्षा आमापन (रेडियो इम्यूनो ऐसे) किट्स :**
  हार्मोन्स तथा औषधियों की सूक्ष्म मात्रा के आकलन हेतु।
- **रेडियोरसायन एवं विकिरण स्रोत :**
  अनुसंधान, औद्योगिक अनुप्रयोगों एवं कैन्सर रोगोपचार हेतु।
- **रेडियोग्राफी कैमरे एवं उपसाधन :**
  सांचों तथा वेल्डों के रेडियोग्राफिक निरीक्षण हेतु।
- **गामा किरणन उपस्कर :**
  चिकित्सा उत्पादों के विकिरण निर्जर्मीकरण या खाद्य किरणन हेतु।
- **विकिरण निर्जर्मीकरण सेवा :**
  प्रयोज्य चिकित्सा उत्पादों जैसे, आई. सैट, वी. कैथीटर (मूत्रनलिका), जाली का कपड़ा, रूई, शल्य ब्लेड, दस्तानें, रिक्त पात्र आदि के विकिरण निर्जर्मीकरण हेतु।

कृपया अधिक जानकारी हेतु सम्पर्क करें :

वरिष्ठ प्रबंधक एवं विपणन संचालन प्रभारी,

विकिरण एवं आइसोटोप प्रौद्योगिकी बोर्ड (बी आर आई टी)

वि. ना. पुरव मार्ग, देवनार, बम्बई - 400 094.

टेलीफोन : 555 1676/555 3145

तार : ब्रिट एटम, बम्बई - 94, टेलेक्स : 011 72212 ब्रिट इन

With Best Compliments from

INDIAN RARE EARTHS LTD.

Offers the following products :

Beach Sand Minerals

Ilmenite (TiO_2 : 60%, 55% & 50%)
Natural Rutile
Zircon/Zircon Flour
Granular Silimanite (-65 +100 Mesh)
Garnet
Leucoxene and Synthetic Rutile

Rare Earths

Rare Earths Chloride
(original and heavies-lean)
Rare Earths Fluoride
Rare Earths Oxide
Cerium Oxide/Cerium Hydrate
Didymlum Carbonate
Samarium/Yttrium/Gadolinium/Europium
Concentrates (Individual and Mixed)

Particular attention of Interested buyers/users is drawn to the following products available at very attractive prices :

Synthetic Rutile (93% TiO_2)
Ilmenite : MK Grade (55% TiO_2 Min.)
Zircon (65% ZrO_2 with max. 0.2% TiO_2 and 0.1% Fe_2O_3)
Granular Silimanite (Min. 59% Al_2O_3)
Samarium Oxide (96%)

For further details, please contact :

The Chief General Manager (Mktg.)
Indian Rare Earths Ltd.
Sherbanoo, 6th Floor, 111, Maharshi Karve Road,
Churchgate, Mumbai - 400 020. INDIA
Tel. : (022) 209 6800, 203 0915 # Fax : (022) 200 4430
Tlx. : (11) 83122, 83254 # Cable : RAREARTH, BOMBAY, INDIA

हिंदी विज्ञान साहित्य परिषद के लिए डॉ. गोविंद प्रसाद कोठियाल द्वारा संपादित तथा
श्री इंद्र कुमार शर्मा द्वारा प्रिंट शॉप, चेंबूर, मुंबई (फोन : 555 2348) में मुद्रित व प्रकाशित ।

भारत सरकार
परमाणु ऊर्जा विभाग

नाभिकीय ईंधन सम्मिश्र

हैदराबाद - 500 062

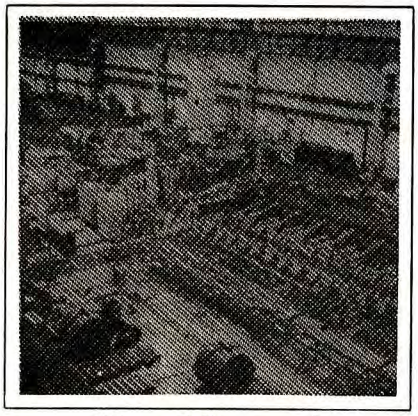

क्षैतिज बहिर्वेधन दाब से

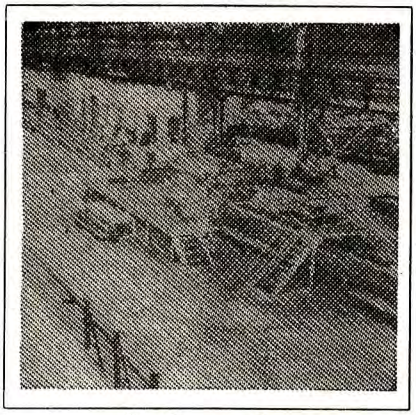

शीत पिल्गरन मिल

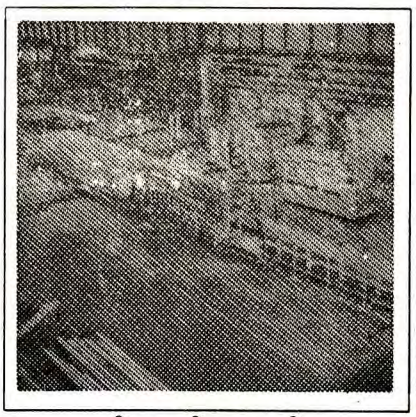

दीप्त अनीलन भट्टी

निम्नलिखित पदार्थों का वाणिज्यिक स्तर पर निर्माण एवं उनकी आपूर्ति की जाती है :-

संधिरहित जंगरोधी इस्पात नलिकाएं / पाइप

रसायन, उर्वरक, धातुकीय, पेट्रोरसायन, तेलशोधक, नाभिकीय तथा विद्युत उत्पादन के उद्योगों के लिए एएसटीएम ए 312/213/269 के अनुसार ऑस्टेनिटिक स्तर की नालिका/पाइप का तीसरे पक्ष/ एन. एफ़. सी. द्वारा निरीक्षण ।

ठेके का कार्य

ग्राहकों द्वारा कच्चे माल दिये जाने पर कुप्रोनिकल, टाइटेनियम और अन्य फेरस व अ-फेरस श्रेणियों को बहिर्वेधन/शीत बेल्लन की बेयरिंग इस्पात नलिकाओं में बदलने के लिए काम स्वीकारे जाते हैं ।

अतिउच्च शुद्धता के विशेष पदार्थ

इलेक्ट्रॉनिक उद्योग के लिए 99.999% शुद्धता के एंटीमनी, बिस्मथ, इंडियम, कैडमियम, जिंक, स्वर्ण, स्वर्ण पोटैशियम साइनाइड आदि की आपूर्ति ।

फोटोकॉपी के लिए अति उच्च शुद्धता के सेलेनियम व टेल्युरियम, इलेक्ट्रॉनिक वल्ब के निर्माण के लिए जर्कोनियम चूर्ण, रसायन और उर्वरक उद्योगों के लिए टेंटालम चादरों तथा छड़ों और संविरचित पदार्थों की आपूर्ति ।

अपनी सभी आवश्यकताओं के लिए लिखें :

विपणन प्रबंधक,

नाभिकीय ईंधन सम्मिश्र

पोस्ट : इ. सी. आई. एल., हैदराबाद 500 062.

● दूरभाष : 7120151 विस्तार (4224) ● (सीधे) 7121239
● टेलेक्स : 0425-7004 ● ग्राम : "एनयूसीएफयूइएल"
● फैक्स : 040-7121209, 7121305

इलेक्ट्रॉन किरण पुंज भट्टी